All Subject to Patiala Jurisdiction.

साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

मूल्य : 6/- रुपए

खेती संदेश

Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

Chief Editor : Parminder Kaur • RNI - PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 22-06-2026 • Vol.2 No.25 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • M. 90410-14575 • Page 12

क्या है जलवायु परिवर्तन, क्यों बदल रहा धरती का मिजाज?

पिछले 100 सालों में वैश्विक तापमान 2 डिग्री फॉरेनहाइट से ज्यादा बढ़ चुका, पृथ्वी के तेज़ी से गर्म होने का सबसे बड़ा कारण ग्रीनहाउस गैसों में वृद्धि

जलवायु परिवर्तन आज पूरी दुनिया के सामने सबसे बड़ी चुनौती बन कर उभरा है। सरल शब्दों में कहें तो जलवायु परिवर्तन का मतलब है लंबे समय तक किसी इलाके या पूरी पृथ्वी की औसत मौसम स्थितियों में होने वाला स्थायी बदलाव। इसमें तापमान, बारिश, सूखा और मौसम के पैटर्न में बदलाव शामिल हैं। जलवायु परिवर्तन के बारे में समझने से

पहले यह जानना जरूरी है कि मौसम और जलवायु में बड़ा अंतर है। मौसम का मतलब है किसी खास दिन या छोटे समय में बाहर की स्थिति जैसे आज बारिश हो रही है या धूप निकली है। वहीं, जलवायु का मतलब है किसी जगह पर कई सालों (आमतौर पर 30 साल या उससे ज्यादा) में औसत मौसम की स्थिति। उदाहरण के लिए फीनिक्स शहर में आमतौर पर सूखा और गर्म मौसम रहता है। अगर एक हफ्ते बारिश हो जाए तो भी वहां की जलवायु रेगिस्तानी ही मानी जाएगी।

पृथ्वी की जलवायु हमेशा से बदलती रही है। हज़ारों साल पहले हिमयुग था, जब आज के अमरीका का बड़ा हिस्सा बर्फ से ढका हुआ था। लेकिन अब वैज्ञानिक चिंता इस बात को लेकर है कि पृथ्वी की जलवायु बहुत तेज़ गति से बदल रही है। पिछले 100 सालों में वैश्विक तापमान 2 डिग्री फारेनहाइट से ज्यादा बढ़ चुका है। पिछले कुछ साल इतिहास के सबसे गर्म साल साबित हुए हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार पिछले 100 सालों में पृथ्वी के तेज़ी से गर्म होने का सबसे बड़ा कारण ग्रीनहाउस गैसों में वृद्धि है। मनुष्य द्वारा की गई गतिविधियां जैसे कोयला, पैट्रोल और डीज़ल का अत्याधिक उपयोग, फैक्ट्रियां, कारें, बसें और जंगलों की कटाई कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन आदि गैसों को वायुमंडल में बढ़ा रही है। ये ग्रीनहाउस गैसें सूरज की गर्मी को पृथ्वी के वायुमंडल में रोक लेती हैं, जिससे धरती का तापमान बढ़ता जाता है। इसे ग्रीनहाउस प्रभाव कहते हैं। प्राकृतिक रूप से यह प्रभाव पृथ्वी को रहने योग्य बनाए रखता है, लेकिन मानवीय गतिविधियों ने इसे असंतुलित कर दिया है। जलवायु परिवर्तन की वजह से समुद्र का जल स्तर बढ़ना, ग्लेशियरों और बर्फ की चादरों का तेज़ी से पिघलना, लू, सूखा और बाढ़ जैसी घटनाओं में बढ़ोत्तरी, बारिश के पैटर्न में बदलाव, पौधों और फूलों के खिलने के समय में परिवर्तन आदि शामिल हैं।

अमेरिकी स्पेस एजेंसी नासा, भारतीय स्पेस एजेंसी इसरो समेत दुनियाभर के वैज्ञानिक सैटेलाइट, हवाई जहाज, मौसम स्टेशन और जमीन पर लगे उपकरणों से निरंतर निगरानी करते हैं। इसके अलावा वे बर्फ की चादरों और समुद्र तल से बर्फ कोर तथा तलछट कोर निकाल कर हज़ारों साल पुरानी जानकारी भी अध्ययन करते हैं। इन सबसे साफ पता चलता है कि पृथ्वी पहले की तुलना में बहुत तेज़ गति से गर्म हो रही है। जलवायु परिवर्तन अब कोई ऐसी समस्या नहीं रह गई, जो बहुत दूर है। यह हमारे रोजमर्रा के मौसम, कृषि, पानी की उपलब्धता और समुद्री जीवन को सीधे प्रभावित कर रहा है। विशेषज्ञों का मानना है कि अगर ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को तुरन्त नियंत्रित नहीं किया गया तो आने वाले समय में इसके और गंभीर परिणाम देखने को मिल सकते हैं।

बढ़ते वैश्विक तापमान के कारण हिमालयी पौधे अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रों में स्थानांतरित हो रहे : अध्ययन

लगातार बढ़ते वैश्विक तापमान के कारण हिमालयी क्षेत्र के पौधे पहाड़ों की अधिक ऊंचाई पर स्थानांतरित हो रहे हैं। यह बात एक अध्ययन में कही गई है। 'इकोग्राफी' नामक पत्रिका में प्रकाशित अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 1999 से 2022 के बीच, अध्ययन से संबंधित सभी 6 क्षेत्रों में वनस्पति रेखा ऊपर की ओर स्थानांतरित हो गई - माउंट एवरेस्ट के क्षेत्र खुंबू में 1.42 मीटर प्रति वर्ष से लेकर मंथांग में 6.95 मीटर प्रति वर्ष तक। संबंधित अध्ययन ब्रिटेन के एक्सेटर विश्वविद्यालय के अनुसंधानकर्ताओं के नेतृत्व में किया गया। अनुसंधानकर्ताओं ने कहा कि जलवायु परिवर्तन के साथ, बर्फ की गहराई में कमी इस परिवर्तन का एक प्रमुख संभावित व्याख्यात्मक कारण हो सकती है। अध्ययन में कहा गया है, "परिणामों से पता चला कि सभी क्षेत्रों में वनस्पति रेखाओं में लगातार ऊपर की ओर बदलाव हो रहा है, जिसकी दर माउंट एवरेस्ट के खुंबू में 1.42 मीटर प्रति वर्ष से लेकर नेपाल के मानथांग में 6.95 मीटर प्रति वर्ष तक है। वनस्पति की हरियाली का प्रारंभिक स्तर आम तौर पर पश्चिम से पूर्वकी ओर बढ़ता गया।" अनुसंधानकर्ताओं ने कहा कि पूर्व के अध्ययनों में हिमालयी क्षेत्र में वनस्पति जीवन के विस्तार की बात सामने आई थी, लेकिन यह नया अध्ययन इस ऊर्ध्वगामी प्रवृत्ति का अधिक विस्तृत आंकलन और मात्रात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

रिसर्च : प्राचीन पौधों के पास है मौसमी तनाव से जूझने की अलग रणनीति

फसलों को जलवायु परिवर्तन से बचाने में विशेष मदद कर सकता है यह अध्ययन

सदियों से कठोर मौसमी परिस्थितियों में भी जीवित रहने वाले प्राचीन पौधों के संबंध में नई जानकारी सामने आई है। केन्द्रीय विश्वविद्यालय के नेतृत्व में की गई रिसर्च से यह पता चला है कि कई पौधे मौसमी तनाव से निपटने के लिए अपने तंत्र को स्वयं संतुलित करते हैं। यह अध्ययन फसलों को जलवायु परिवर्तन से बचाने में विशेष मदद कर सकता है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों के नेतृत्व में लगभग 10 वर्षों तक यह शोध किया गया। इस रिसर्च में 4 प्रतिष्ठित संस्थान शामिल हैं। दरअसल, इस शोध का महत्व केवल वैज्ञानिक समझ तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका सीधा संबंध भविष्य की खेती से भी है। वैज्ञानिकों का मानना है कि इन प्राचीन पौधों के अनुकूलन तंत्र को समझ कर ऐसी नई फसलें विकसित की जा सकती हैं, जो जलवायु परिवर्तन से पैदा होने वाली चुनौतियों, जैसे कि सूखा, बाढ़ और तापमान जैसे बदलाव का बेहतर सामना कर सकें।

वैज्ञानिकों ने मेघालय जैसे समान पर्यावरण में पाई जाने वाली 2 प्रजातियों, डुमोर्टिएरा हिर्सूटा और प्लाजियोचास्मा एपेंडिकुलेटम, का गहराई से अध्ययन किया। दिलचस्प बात यह सामने आई कि दोनों पौधों ने कठिन परिस्थितियों से निपटने के लिए अलग-अलग रणनीतियां विकसित की हैं। डुमोर्टिएरा हिर्सूटा अनुकूल मौसम, खासकर मौनसून के बाद, तेज़ी से विकास करती है और उपलब्ध संसाधनों का पूरा उपयोग करती है, लेकिन जैसे ही परिस्थितियां कठोर होती हैं, यह अपनी ऊर्जा को बचाकर खुद को सुरक्षित रखने लगती है। इसके विपरीत, प्लाजियोचास्मा एपेंडिकुलेटम धीरे-धीरे लेकिन लगातार अपने जीन की गतिविधियों को नियंत्रित करती है, जिससे वह लंबे समय तक चलने वाले पर्यावरणीय तनाव में भी स्थिर बनी रहती है।

एक तरह का सर्वाइवल मोड

शोध में यह भी सामने आया कि जब मौसम प्रतिकूल होता है, तो ये पौधे अपनी ऊर्जा का उपयोग बदल देते हैं। वे अपनी वृद्धि और प्रकाश संश्लेषण को धीमा कर देते हैं और ऊर्जा के रक्षा तंत्र को मज़बूत करने में लगा देते हैं। इस दौरान ऐसे प्रोटीनों की मात्रा बढ़ जाती है, जो पौधों को तनाव से बचाने में मदद करते हैं, जबकि विकास से जुड़े प्रोटीन कम हो जाते हैं। यह एक तरह का सर्वाइवल मोड है, जो इन्हें कठिन परिस्थितियों में भी जीवित बनाए रखता है। रिसर्च के ये निष्कर्ष अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठित पत्रिकाओं प्लांट मॉलिक्यूलर बायोलॉजी रिपोर्टर (स्प्रिंगर नेचर) तथा जर्नल ऑफ बायोलॉजी में प्रकाशित हुए हैं। जैव-रासायनिक स्तर पर भी कई अहम संकेत मिले। जैसे-जैसे मौसम कठोर होता है, पौधों में ऑक्सीडेटिव तनाव बढ़ता है, लेकिन इसके साथ ही सुपर ऑक्साइड डिसम्यूटेज जैसे एंटीऑक्सीडैंट एंजाइम सक्रिय होकर इस नुकसान को कम करते हैं। वहीं मौनसून के दौरान क्लोरोफिल की मात्रा अधिक पाई गई, जो बेहतर वृद्धि के अनुकूल वातावरण का संकेत देती है।

सरकार पेट्रोलियम उत्पाद के दाम और महंगाई दरों में हुई बढ़ोतरी से

अप्रासंगिक हुए घोषित समर्थन मूल्य को लाभकारी बनाने के लिए 10 प्रतिशत वृद्धि की घोषणा करे

भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय की 13 मई 2026 को प्रेस ब्यूरो के माध्यम से जारी विज्ञप्ति के अनुसार कैबिनेट ने विपणन सीजन 2026-27 के लिए खरीफ फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) को मंजूरी दी है। जिसके अनुसार पिछले वर्ष के मुकाबले इस वर्ष खरीफ 2026-27 सीजन के लिए मुख्य फसल धान के मूल्य में मात्र 3 प्रतिशत की वृद्धि की गई है। इसके अतिरिक्त मूंग के दाम में 0.15 प्रतिशत, मक्का के 0.4 प्रतिशत, मूंगफली के 3.4 प्रतिशत, बाजरा के 4.5 प्रतिशत, तिल के 5 प्रतिशत, उडद के 5.1 प्रतिशत, नाईजरसीड के 5.4 प्रतिशत, तूर/अरहर के 5. 6 प्रतिशत, सोयाबीन के दाम को 5.7 प्रतिशत की मामूली वृद्धि को मंजूरी दी गई है। गौरतलब है कि इन घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) में की गई मामूली वृद्धि, सरकार द्वारा इस दौरान अपने कर्मचारियों, अधिकारियों और पैशनरों के 6 प्रतिशत महंगाई भत्ते में की गई वृद्धि से भी कम है, जो सरकार की पक्षपातपूर्ण नीति को दर्शाता है।

उल्लेखनीय है कि उपरोक्त विज्ञप्ति में झूठे तथ्यों के आधार पर बताया गया है कि इस घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य वृद्धि में सभी भुगतान की गई लागतें शामिल हैं, जैसे कि किराए पर लिए गए मानव श्रम, बैल श्रम / मशीन श्रम, बीज, उर्वरक, खाद जैसे कच्चे माल के उपयोग पर होने वाले खर्च, सिंचाई शुल्क, औजारों और कृषि भवनों पर मूल्य ह्रास, कार्यशील पूंजी पर ब्याज, पंप सेट के संचालन के लिए डीजल/बिजली आदि, विविध खर्च और पारिवारिक श्रम का अनुमानित मूल्य आदि के साथ पट्टे पर ली गई भूमि के लिए भुगतान किया गया किराया भी शामिल किया गया है। जबकि तथ्य यह है कि पट्टे पर ली गई भूमि के लिए भुगतान किया गया किराया आदि सी-2 कुल लागत की गणना में शामिल किया जाता है और सरकार अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय विपणन नियमो के विरुद्ध पिछले 6 दशको से ए-2 एफ.एल. लागत पर समर्थन मूल्य घोषित करके गेहूं-धान की सरकारी खरीद से हरियाणा-पंजाब के किसानों का 30,000 करोड़ रूपये वार्षिक से अधिक का आर्थिक नुक्सान कर रही है। सरकार की इस गलत नीति सी-2 लागत के आधार पर न्यूनतम समर्थन मूल्य नहीं घोषित करने के दुष्प्रभाव से गेहूं-धान फसल चक्र की विश्व स्तरीय उच्च उत्पादकता लेने और समर्थन मूल्य पर फसल उपज बिक्री के बावजूद हरियाणा-पंजाब के किसान को औसत 40,000 रुपये प्रति एकड़ वार्षिक का आर्थिक नुक्सान होने से किसान कर्जबन्द बनकर, आत्महत्या को मजबूर हो रहे है।

डॉ. वीरेन्द्र सिंह लाठर,
पूर्व प्रधान वैज्ञानिक अनुसंधान
भारतीय कृषि अनुसंधान
संस्थान, नई दिल्ली
मो. 9416801607

पश्चिम एशियाई संकट और अल-नीनो के सम्भावित दुष्प्रभाव से खुदरा कीमतों में जनवरी 2025 के बाद से सबसे तेज गति से वृद्धि हुई, और सूचकांक में 4.06 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई, जिससे मई में महंगाई दर का आंकड़ा 16 महीनों में सबसे अधिक हो गया। पेट्रोल और डीज़ल की मुद्रास्फीति मई 2026 में बढ़कर 6 प्रतिशत हो गई, जो अप्रैल 2026 में 2.8 प्रतिशत और मार्च 2026 में मात्र 0.5 प्रतिशत थी, जिससे ईंधन की लागत का प्रभाव दिखता है। इसके अलावा, अर्थशास्त्रियों का अनुमान है कि पश्चिम एशिया युद्ध से लागत हस्तांतरण के कारण जून 2026 में खुदरा वस्तुओं की कीमतें बढ़ेंगी। वार्षिक सीपीआई मुद्रास्फीति 5 प्रतिशत से 5.5 प्रतिशत के बीच रहने की उम्मीद है। पश्चिम एशिया से लागत हस्तांतरण के अलावा, विश्लेषक अलनीनो के कारण सामान्य से कम मौनसून पर भी नजर रख रहे है। इन सभी कारणों के दुष्प्रभाव से विभिन्न खरीफ फसलों की कृषि लागत 10-20 प्रतिशत अप्रत्याशित वृद्धि होने की सम्भावना है, जिसके दुष्प्रभाव को कम करने के लिए और पेट्रोलियम उत्पाद के दाम और महंगाई दरों में अप्रत्याशित बढ़ोतरी होने से अप्रासंगिक हुए घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य को किसानों के लिए लाभकारी बनाने के लिए, सरकार को अब घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य पर कम से कम 10 प्रतिशत वृद्धि की घोषणा करनी चाहिए।

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9—ए, अजीत नगर,
पटियाला—147001
(पंजाब)
मो. 98151—04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला—147001
(पंजाब)
मो. 90410—14575

वर्ष : 02 अंक : 25
तिथि : 22-06-2026

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers,** Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

जलकुंभियों से बनाएं मूल्यवान जैविक खाद

देश का शायद ही कोई गांव या शहर का ऐसा हिस्सा बचा होगा, जहां पर ठहरा पानी हो और उसमें जलकुम्भी का राज ना हो। सरकार चाहे तो एक पंथ दो काज कर सकती है। प्रशिक्षित करके फिजिकल तौर पर इसे खत्म किया जा सकता है और दवाईयों का निर्माण करके या आयुर्वेद की दवाईयां बनाने वाली कंपनियों को सप्लाई करके युवा मोटी कमाई कर सकते हैं। इसके और भी उपयोग हैं, जैसे फर्नीचर, हैंडबैग, ऑर्गेनिक खाद, जानवरों के चारे के साथ कागज़ बनाने में भी इसका इस्तेमाल किया जा सकता है। देश की पुरातन चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद में जलकुम्भी का खासा महत्व है। अस्थमा, कफ, एंजाइमा, थाइराइड, शरीर के अंदरूनी दर्द, त्वचा संबंधी बीमारियों सहित तमाम अन्य प्रकार के उपयोग को लेकर इसका तैयार होने वाला तेल बहुत महंगा बिकता है। इतना ही नहीं सुखा कर पाउडर के रूप में तो और महंगा बिकता है। जलकुम्भी पर रिसर्च कर रहे दिल्ली के डॉक्टर अरविन्द सिंह इसके उपयोग से इस पर नियंत्रण की वकालत करते हैं।

जलकुम्भियों से बनाएं मूल्यवान जैविक खाद : भारत के सभी राज्यों के निचले इलाकों में जहां पानी जमा होता है या गंदे तालाब हैं, वहां जलकुम्भी ज्यादा मिलती है। बारिश के वक्त वह तेज़ी से बढ़ती है। पानी के निकास वाली जगहों जैसे नालों व तालाबों में जलकुम्भी उग जाने से पानी निकलने में परेशानी आती है। यह एक खरपतवार है, लेकिन इसके पौधे हमें फसल के लिए ज़रुरी पोषक तत्व नाइट्रोजन 2.5 फीसदी, फास्फोरस 0.5 फीसदी, पोटाशियम 5.5 फीसदी और कैल्शियम ऑक्साइड 3 फीसदी पाया जाता है। इसके अलावा इसमें तकरीबन 42 फीसदी कार्बन होता है। केमिकल खादों के साथ जलकुम्भी का इस्तेमाल करने पर मिट्टी के भौतिक गुणों पर इसका बड़ा असर पड़ता है। नइट्रोजन और पोटाशियम का अच्छा जरिया होने की वजह से आलू के लिए जलकुम्भी का महत्व और भी ज्यादा हो जाता है।

हाइसिंथ यानि की जलकुंभी, पोखरे या तालाब में होने वाले एक तरह का खरपतवार जिसको अधिकांश लोग अब तक अभिशाप ही मानते आए हैं, लेकिन ज़िले में कुछ प्रगतिशील किसान इस अभिशाप को भी अब वरदान बनाने की कोशिश में लगे हुए हैं। सालों साल पोखरों और तालाब में टिड्डी दल की तरह उगने वाले खरपतवार की सफाई में सार्वजनिक पैसे का एक बड़ा हिस्सा खर्च होता रहा है। सफाई के बाद भी इस बात की गारंटी नही रहती कि अगले साल ये खरपतवार नहीं उगेंगे या कि तालाब पूरी तरह साफ हो गया। सिंचाई विभाग ने इस वित्त वर्ष में पोखरों और तालाब की सफाई और पानी में उगे हाइसिंथ यानि की जलकुंभी के खात्मे के लिए खरपतवारनाशक के

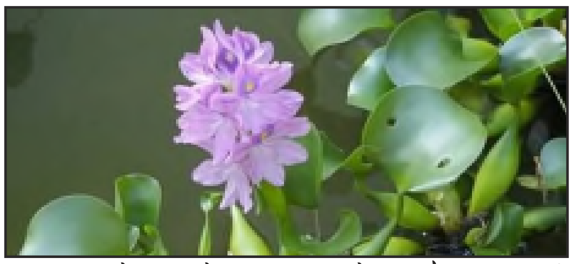

छिड़काव के मद में 5.5 करोड़ रुपए का बजट तैय किया है। खरपतवार-नाशक पारिस्थितीयकीय तंत्र के लिए भी हानिकारक साबित होता है। उद्यमी के रूप में पहचान स्थापित कर चुके प्रगतिशील किसान देवीनेनी मधुसूदन राव का मानना है कि योजनाबद्ध तरीके से काम करके जलकुंभियों का उपयोग मूल्यवान जैविक खाद (कम्पोस्ट) बनाने के लिए किया जा सकता है, जिसको 15 रुपए किलो दर से बेचा जा सकता है।

साधारण प्रणाली : नियमित डीज़ल इंजन द्वारा संचालित मशीन के उपयोग से पानी में उगने वाले खरपतवार की कटाई आसानी से की जा सकती है। मशीन जलकुंभियों को पानी की सतह से बाहर निकाल कर टुकड़ों में विभक्त कर देता है, जिससे इनका उपयोग करना और इनके परिवहन में आसानी होती है। इन जलकुंभियों के कटे हुए टुकड़ों से उच्च श्रेणी के कंपोस्ट बनाए जा सकते है। परीक्षणों से पता चला है कि जलकुंभी उर्वरक अवयवों का उच्च अवशोषण है। जलकुंभी उर्वरक अवयवों का उच्च अवशोषण है। जलकुंभी शुद्धीकरण का एक साधन प्रदान करते है और बड़े पैमाने पर नष्ट हो जाने वाले उपजाऊ तत्वों को अवशोषित कर, पारिस्थितिकीय तंत्र पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव को कम करते हैं। जलकुंभियों से बचने वाले उच्च श्रेणी के कम्पोस्ट जलकुंभियों से निर्मित कम्पोस्ट 15 रुपए प्रति किलो बिकते है। पोखरे और तालाब के ताज़े पानी में पैदा होने वाले खरपतवार को जलकुंभी कहते है। इससे पानी का बहाव बाधित होता है, पानी में नाव की गति को बाधा पहुंचती है और मछली-पालन जैसे उद्यम को इससे नुकसान होता है। मशीन की मदद से जलकुंभियों को टुकड़ों में काट कर उससे मदद आसानी से उच्च श्रेणी के कम्पोस्ट का निर्माण किया जा सकता है। जलकुंभियों में प्रचुर मात्रा में नाइट्रोजन अवयव होते हैं, इसलिए इसे बायोगैस के लिए एक अवयव के तौर पर इस्तेमाल किया जा सकता है।

पशुओं को लू लगने के कारण दूध उत्पादन हो सकता है कम

बचाव के लिए पर्याप्त मात्रा में पानी पिलाएं, हरा चारा खिलाएं

गर्मी में पशुओं के प्रति लापरवाही पशुपालकों को भारी पड़ सकती है। लू लगने पर पशुओं का जहां दूध उत्पादन कम हो सकता है, वहीं वह बीमारी से भी ग्रस्त हो सकते हैं। जरा सी देखभाल कर पशुओं को लू से बचाया जा सकता है। दरअसल, हर साल गर्मियों के मौसम में हवा के गर्म थपेड़ों और बढ़ते हुए तापमान से पशुओं में लू लगने का खतरा बढ़ जाता है। लू लगने से पशुओं की त्वचा तो सिकुड़ जाती है साथ ही दुधारू पशुओं का दूध उत्पादन भी घट जाता है। गर्मी के मौसम में पशुपालकों को अपने पशुओं को सुरक्षित रखने के लिए भी सावधान रहने की आवश्यकता होती है। गर्मियों के मौसम में चलने वाली गर्म हवाएं (लू) जिस तरह हमें नुकसान पहुंचाती

हैं ठीक उसी तरह ये हवाएं पशुओं को भी बीमार कर देती हैं।

जानिए, पशुओं में लू के लक्षण

- लू लगने पर पशु की मुँह से जीभ बाहर निकल जाती है और उसे सही तरह से सांस लेने में कठिनाई होती है।
- नक्सीर आने पर पशुओं के मुँह के आस-पास झाग आ जाती है।
- लू लगने पर पशु की आँख व नाक लाल हो जाती है। अक्सर पशु की नाक से खून आना शुरू हो जाता है।
- पशु को लू लगने पर 106 से 108 डिग्री फारेनहाइट तेज़ बुखार होता है। इसके कारण पशु सुस्त होकर खाना-पीना छोड़ देता है।
- धड़कन तेज़ हो जाती है और उसे सांस लेने में कठिनाई का अनुभव होता है। पशु चक्कर खाकर गिर जाता है तथा मर भी जाता है।

ऐसे करें बचाव

- पशु बाड़े में शुद्ध हवा जाने एवं दूषित हवा बाहर निकलने के लिए रोशनदान होना चाहिए।
- गर्म दिनों में पशु को दिन में नहलाना चाहिए। भैंसों को ठंडे पानी से नहलाना चाहिए।
- पशु को ठंडा पानी पर्याप्त मात्रा में पिलाना चाहिए। पशुओं को टीन के नीचे नहीं बांधना चाहिए।
- गर्मी के मौसम में पशुओं को हरा चारा अधिक मात्रा में देना चाहिए।

ये भी जानें

- सूखी त्वचा, कोई पसीना नहीं।
- शरीर में कोई हलचल नहीं व बेहोशी जैसी स्थिति।
- बहुत तेज़ बुखार।
- यदि तुरन्त इलाज ना हो तो जानलेवा।

पोलीफेगोटार्सोनेमस लेटस (पीली माइट)

मिर्च का प्रमुख शत्रु

मिर्च *(कैप्सीकम एनम लिनियस)* हमारे यहां पर उगाए जाने वाली एक महत्वपूर्ण नकदी मसाला फसल है। मसाला के तौर पर इसका व्यापक तौर पर प्रयोग होता है, साथ ही साथ सब्ज़ी के तौर पर भी व्यापक पैमाने पर भी इसका प्रयोग किया जाता है। विश्व में मिर्च की खेती लगभग 1.7 मिलियन (17 लाख) हैक्टेयर क्षेत्रफल में होती है, जिससे 7.1 मिलियन (71 लाख) टन उत्पादन होता हैं भारतीय परिपेक्ष में मिर्च की खेती 8.31 लाख हैक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है, जिससे लगभग 18.72 लाख टन सूखी मिर्च का उत्पादन होता है। हमारे देश में मिर्च एक महत्वपूर्ण नकदी मसाला फसल है, जिसकी खेती सिंचित तथा असिंचित कृषि क्षेत्रों में बड़े ही व्यापक पैमाने पर की जाती है। भारत में मिर्च की खेती आंध्र प्रदेश, ओड़ीसा, महाराष्ट्र, बंगाल, कर्नाटक, राजस्थान तथा तामिलनाडू राज्यों में होती है। वैश्विक स्तर पर भारत मिर्च का सबसे बड़ा उत्पादक राष्ट्र है तथा संपूर्ण विश्व का 25 प्रतिशत मिर्च उत्पादन भारत में ही हाता है। हमारे देश से लगभग 1 लाख टन मिर्च का अमेरिका, श्रीलंका, बांग्लादेश, कनाडा और सिंगापुर आदि देशों में विविध रूपों जैसे ताज़ा मिर्च, मिर्च पाऊडर तथा ओलियोरेजिन के रूप में निर्यात किया जाता है। मिर्च के निर्यात से लगभग 366.80 करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा का अर्जन भी होता है। मिर्च की फसल पर 51 से भी अधिक नाशीजीवों का प्रकोप देखा गया है। इनमें पत्तियां खाने वाले कीट, फलों को खाने वाले कीट तथा रस चूसने वाले कीट प्रमुख हैं। इन रस चूसने वाले नाशीजीवों में पीली माइट (पोलीफेगोटार्सोनेमस लेटस), थ्रिप्स (सिर्टोथ्रिप्स डोर्सोलिस), एफिड (एफिस गोसीपी) आदि का स्थान प्रमुख है। ये नाशीजीव मिर्च की सभी अवस्थाओं में फसल को भारी मात्रा में नुकसान पहुंचाते है। रस चूसने वाले इन नाशीजीवों में पीली माइट (पोलीफेगोटार्सोनेमस लेटस) का प्रमुख स्थान है। ये माइट टार्सोनेमिडी कुल से संबंधित है तथा इसे पीली-मकड़ी, ट्रोपिकल माइट या ब्रांड माइट के नाम से सारी दुनिया में जाना जाता है। ये माइट मिर्च की एक प्रमुख नाशीजीव है, जोकि प्राय: सभी स्थानों पर मिर्च की फसल को ग्रसित करके, फसल को भारी मात्रा में नुकसान पहुंचाती है। इस माइट के द्वारा रस चूसने से मिर्च में शीर्षभाग (Petiols) लम्बी हो जाती है, जिससे वो चूहों की पूंछ (Rat Tail) के समान हो जाती है, इसके बाद पत्तियां टेढ़ी-मेढ़ी हो कर विकृत हो जाती हैं। यदि मिर्च की फसल में इस माइट का प्रकोप पुष्पन से फल उत्पादन की अवस्था के बीच में हो तो मिर्च की फसल का उत्पादन काफी कम हो जाता है तथा एक या दो बार ही फलों की तुड़ाई संभव हो पाती है तथा लगभग 75 से 80 प्रतिशत तक उपज में कमी आ जाती है। मिर्च में पीली माइट का बहुत अधिक प्रकोप होने की दशा में पौधों की बढ़वार पूर्ण रूप से रुक जाती है तथा पौधों की असमय मृत्यु हो जाती है, जिसके कारण सम्पूर्ण फसल तथा उपज चौपट हो जाती है। मिर्च के अतिरिक्त ये माइट विश्व भर के 104 से भी अधिक कृषि तथा अन्य जंगली पौधों को ग्रसित करती हुई देखी गई है।

पीली माइट का वितरण सम्पूर्ण विश्व के मिर्च उत्पादक देशों में दिखने को मिलता है। इसकी प्रमुख उपस्थिति भारत, श्रीलंका, दक्षिण अफ्रीका, अमेरिका जैसे देशों में दर्ज की गई है। हमारे देश भारत में इस माइट का प्रकोप प्राय: सभी मिर्च उत्पादक राज्यों जैसे आंध्र प्रदेश, ओड़ीसा, महाराष्ट्र, बंगाल, कर्नाटक, राजस्थान तथा तामिलनाडू में देखी गई है।

इस माइट का जीवन चक्र अंडा, लार्वा, निम्फ तथा वयस्क अवस्थाओं से पूर्ण होता है। पीली माइट अपने सफेद, पारदर्शी, चमकीले अंडे मिर्च की शीर्ष पत्तियों, नई कोपलों, कोमल तनों, छोटे फलों तथा कई बार फूलों पर भी देती है। इस माइट के अंडों पर 6 कतारों वाले उभरे धब्बे (ट्यूबरीकल्स) स्पष्ट तौर पर देखे जा सकते हैं तथा इन धब्बों की 7 लाईन प्रत्येक अंडे पर देखी जा सकती हैं। पीली माइट अधिकतर मध्यशिरा तथा कोमल पत्तियों के नज़दीक ही अंडे देती है। मादा माइट प्रति दिन लगभग 6 अंडे देती है। इन अंडों से 24-72 घंटों में लार्वा बाहर निकल आता है। अंडों से निकला लार्वा सुस्त व धीमा होता है तथा ये लार्वा अवस्था 1 से 2 दिनों तक की होती है, पूर्ण विकसित लार्वा कुछ समय निष्क्रिय होकर शांत हो जाती है तथा इसे आराम अवस्था के नाम से जाना जाता है। ये अवस्था कुछ घंटों (2 से 3 घंटों) की होती है तथा इसमें से निम्फ बाहर निकलता है। निम्फ अवस्था 2 से 3 दिनों तक की होती है, पूर्ण विकसित निम्फ कुछ समय निष्क्रिय होकर शांत हो जाती है तथा इसे निमफोक्रिसायलीस अवस्था के नाम से जाना जाता है। जहां ये कुछ समय तक आराम अवस्था में रहता है तथा फिर इनसे वयस्क पीली माइट बाहर निकल आती है। वयस्क मादा माइट अंडाकार होती है, जबकि वयस्क नर का

उदर भाग कुछ तीखा होता है। नर माइट का आकार मादा की तुलना में छोटा होता है तथा वे बहुत सक्रिय होते हैं। नर तथा मादा 3 से 4 और 4 से 8 दिनों तक जीवित रहते हैं। मादा माइट प्राय: लैंगिक तथा अलैंगिक दोनों ही प्रचार से प्रजनन करती है। लैंगिक प्रजनन में नर तथा मादा दोनों ही पैदा होते हैं, जबकि अलैंगिक प्रजनन से केवल नर माइट ही पैदा होती है।

पीली माइट का प्रकोप मिर्च की शीर्ष अथवा ऊपरी कोमल पत्तियों पर शुरू होता है, इसके बाद पत्तियां टेढ़ी-मेढ़ी होने लगती हैं तथा बाद में विकृत हो जाती हैं। ये सामान्य पत्तियों की तुलना में आकार में छोटी हो जाती हैं। नई निकलने वाली पत्तियां भी इस माइट से पुन: ग्रसित हो जाती हैं तथा पौधों का आकर भी छोटा रह जाता है। यदि पुष्पन के समय पर इस माइट का प्रकोप होता है, तो पौधों से फूल असमय ही गिर जाते हैं, जिससे उपज पर प्रतिकूल असर पड़ता है। माइट ग्रसित मिर्च के पौधे आकार में छोटे तथा कमज़ोर दिखाई देते हैं। इस माइट के प्रकोप से उपज में 20 से 50 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। जब पीली माइट तथा मिर्च के थ्रिप्स का प्रकोप एक साथ होता है, तो इन दोनों से मिले-जुले प्रकोप के कारण उपज में 50 प्रतिशत से भी अधिक का नुकसान होता है, जिससे मिर्च उत्पादकों को भारी आर्थिक नुकसान होता है। जब पीली माइट का प्रकोप बहुत अधिक होता है, तब उपज में 96 प्रतिशत तक का नुकसान होता देखा गया है।

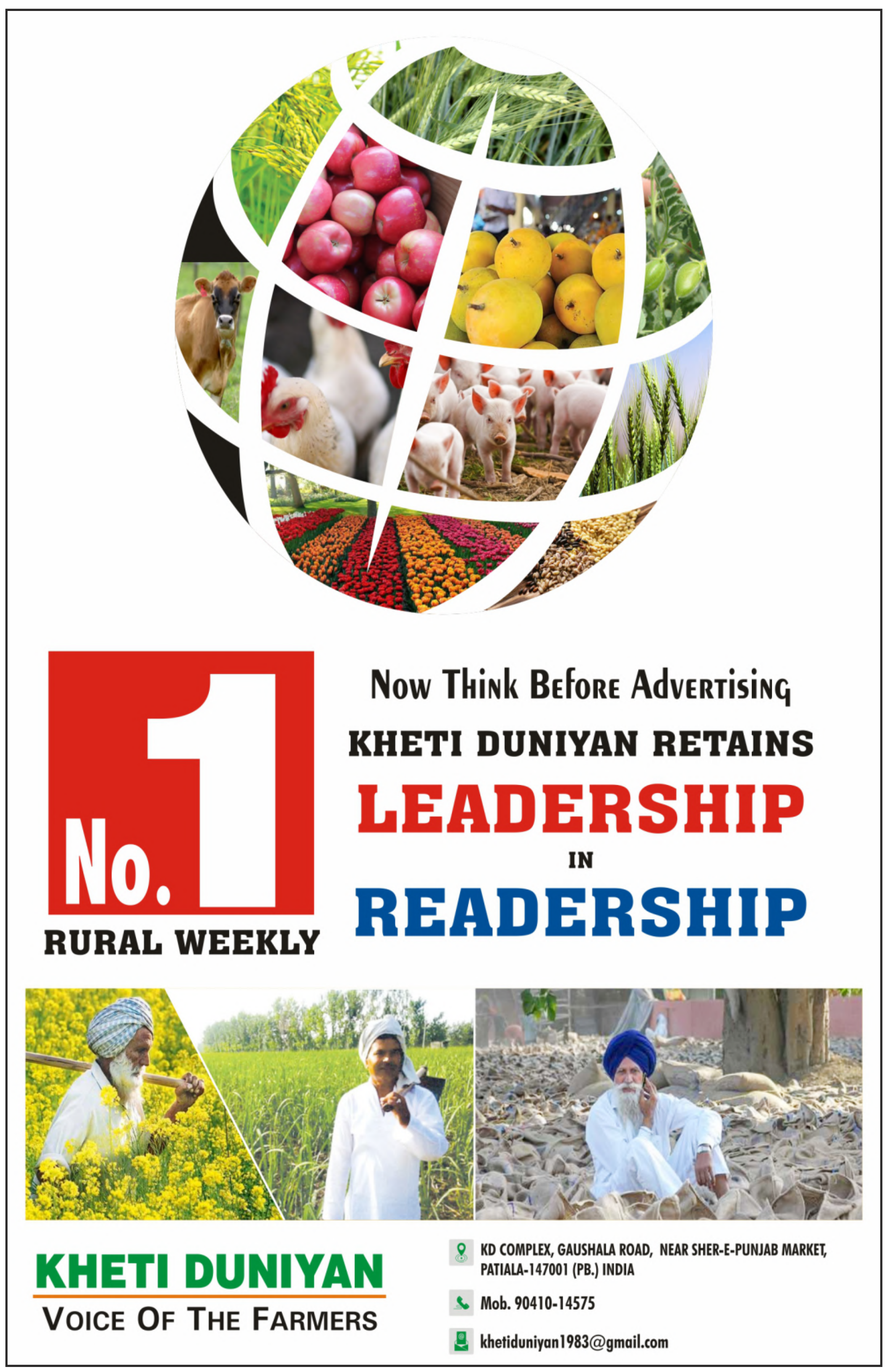

कागजी नींबू की खेती

भारत को नीबूवर्गीय फलों का घर माना जाता है। यहां इस वर्ग की विभिन्न प्रजातियां पाई जाती हैं। इस वर्ग के फलों में मुख्य रूप से संतरा, मौसमी, नींबू, माल्टा एवं ग्रेपफ्रूट आते हैं। केले एवं आम के बाद नीबूवर्गीय फसलों का भारत में क्षेत्रफल की दृष्टि से तीसरा स्थान है। नींबू, जिसको आम बोलचाल की भाषा में कागजी नींबू के नाम से जाना जाता है, को देश के लगभग सभी राज्यों में उगाया जाता है। यह फल अपने गुणों के कारण खासा लोकप्रिय है। यही कारण है कि गर्मियों में इसके भाव 100 रूपये प्रति कि.ग्रा. से भी अधिक पहुंच जाते हैं। इसमें औषधीय गुण मौजूद होने के कारण इसके फलों का उपयोग विभिन्न तरीकों से किया जाता है। इसके फलों में विटामिन 'सी' के अलावा विटामिन 'ए', विटामिन 'बी–1', लौह, फॉस्फोरस, कैल्शियम, प्रोटीन, रेशा, वसा, खनिज और शर्करा भी मौजूदा होते हैं।

कागजी नींबू के फलों में 42 से 50 प्रतिशत तक रस

निकलता है। इसका प्रयोग स्क्वैश, कोर्डियल और अम्ल इत्यादि बनाने के साथ-साथ प्रतिदिन के खाने में भी होता है। नींबू का रस पीने से शरीर में ताजगी एवं स्फूर्ति का भाव पैदा होता है। इसके फलों से स्वादिष्ट आचार भी बनाया जाता है। यही नहीं इसके छिलकों को सुखाकर विभिन्न तरह के सौंदर्य प्रसाधन भी बनाये जाते है। इन सभी विशेषताओं के कारण इसकी मांग लगभग वर्ष भर बनी रहती है। परंतु तकनीकी जानकारी के अभाव एवं कीट व रोगों का सही समय पर निदान न कर पाने के कारण किसानों को आशातीत लाभ नहीं मिल पाता है।

भूमि व जलवायु :– नींबू का पौधा काफी सहिष्णु प्रवृत्ति का होता है, जोकि विपरीत दशाओं में भी सहजता से पनप जाता है। अच्छा उत्पादन लेने के लिए उपोष्ण तथा उष्ण जलवायु सर्वोत्तम मानी गई हैं। ऐसे क्षेत्र जहां पाला कम पड़ता है, वहां इसको आसानी से उगा सकते है। इसकी खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। इसके पौधों की समुचित बढ़वार एवं पैदावार के लिए बलुई तथा बलुई दोमट मृदा उत्तम है, जिसमें जीवांश पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपस्थित हों। इसके साथ ही जल निकास का भी समुचित प्रबंधन हो एवं उसका पी-एच मान 5.5 से 7.5 के मध्यम हो। मृदा में 4-5 फुट की गहराई तक किसी प्रकार की सख्त तह नहीं हो, तो अच्छा रहता है।

उन्नत प्रजातियां :– कागजी नींबू की कई प्रजातियां प्रचलित है, जिसका चयन क्षेत्र विशेष अथवा गुणों के आधर पर कर सकते हैं। कुछ महत्वपूर्ण प्रजातियां है: पूसा अभिनव, पूसा, उदित, विक्रम, कागजी कला, प्रमालिनी, चक्रधर, साई सर्बती, जय देवी, पी.के.एम. -1, एन.आर.सी.सी. नींबू-7 और एन.आर.सी.सी. नींबू-8 इत्यादि। पौधे किसी विश्वसनीय स्त्रोत अथवा सरकारी नर्सरी से ही खरीदें। पौधे खरीदते समय यह भी ध्यान रखें कि वे स्वस्थ एवं रोगमुक्त हों।

पौध प्रसारण :– नींबू का प्रवर्धन बीज, कलिकायन एवं एयर लेयरिंग (गूटी विधि) से किया जा सकता है। इसके बीजों में बहुभ्रूणता पाई जाती है, जिसके कारण इसका व्यावसायिक प्रसारण बीज द्वारा ही अधिक किया जाता है। इसके बीजों में किसी प्रकार की सुषुप्तावस्था नहीं पाई जाती है।

कागजी नींबू में गूटी विधि भी काफी प्रचलित है। इसके द्वारा कम समय में ही अच्छे पौधे तैयार किए जा सकते हैं। इस कार्य के लिए वर्षा वाला मौसम सर्वोत्तम होता है। गूटी तैयार करने के लिए पेंसिल की मोटाई की शाखा (1.0-1.5 सै.मी.), जोकि लगभग एक वर्ष पुरानी हो, का चयन कर लें। चयनित शाखा से छल्ले के आकार की 2.5-3.0 सै.मी. लंबाई की छाल निकाल लें। छल्ले के ऊपरी सिरे पर सेराडेक्स पाऊडर या इंडोल ब्यूटारिक एसिड (आई.बी.ए.) का लेप लगाकर छल्ले को नम मॉस घास से ढक दें। ऊपर से लगभग 400 गेज की पॉलीथीन को 15-20 सै.मी. चौड़ी पट्टी से 2-3 बार लपेटकर सुतली अथवा धागे से दोनों सिरों को कसकर बांध दें। 1.5-2.0 महीने बाद जब पॉलीथीन में से जड़ें दिखाई देने लग जाएं तब इस शाखा को पौधे से अलग करके नर्सरी में थैलियों में लगा दें।

सिंचाई :– यदि वर्षा नहीं हो रही हो तो रोपण के तुरन्त बाद सिंचाई अवश्य करें। इसके पश्चात मृदा में पर्याप्त नमी बनाये रखें, खासकर पौधों के रोपण के शुरूआती 3-4 सप्ताह में और इसके बाद एक नियमित अंतराल पर सिंचाई करते रहें। पौधों की सिंचाई थाला बनाकर अथवा टपक सिंचाई पद्धति से कर सकते हैं। सिंचाई करते समय हमेशा यह ध्यान रखें कि पानी, पौधे के मुख्य तने के संपर्क में न आए। इसके लिए तने के आसपास हल्की ऊंची मृदा चढ़ा दें।

खाद एवं उर्वरक :– खाद एवं उर्वरकों की मात्रा देने का समय और तरीका पोषण प्रबंधन में बहुत महत्वपूर्ण है। खाद एवं उर्वरकों की मात्रा, मृदा की उर्वरा क्षमता एवं पौधे की आयु पर निर्भर करती हैं। सही-सही मात्रा का निर्धारण करने के लिए मृदा की जांच आवश्यक है। यदि संतुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरक डाली जाए तो अच्छे उत्पादन के साथ-साथ मृदा के स्वास्थ्य का भी ध्यान रखा जा सकता है।

खाद तथा उर्वरकों को हमेशा पौधों के मुख्य तने से 20-30 सै.मी. की दूरी पर डालना चाहिए। गोबर की खाद की पूरी मात्रा को दिसंबर-जनवरी में, जबकि उर्वरकों को दो भागों में बांटकर दें। पहली मात्रा मार्च-अप्रैल में एवं शेष आधी मात्रा को जुलाई-अगस्त में दें। नींबू में सूक्ष्म पोषक तत्वों का भी बहुत महत्व है। अत: इतनी कमी के लक्षण दिखाई देने पर 0.4-0.7 प्रतिशत जस्ते व फेरस सल्फेट तथा 0.1 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव करें।

कांट-छांट :– कागजी नींबू में स्वाभाविक तौर पर कटाई-छंटाई की आवश्यकता नहीं होती है। परंतु रोपण के प्रारंभिक वर्षों में पौधे को सही आकार देने के लिए जमीन की सतह से लगभग दो फुट की ऊंचाई तक शाखाओं को हटाते रहना चाहिए। बाद के वर्षों में भी सूखी, रोगग्रस्त एवं आड़ी-तिरछी हटनियों को काटते रहना चाहिए। इसके साथ ही जलांकुरों की पहचान करके उनको भी हटा दें।

अंत: फसलीकरण :– रोपण के प्रारंभिक 2-3 वर्षों तक कतारों में खाली पड़ी जगह पर कोई उपयुक्त फसल लेकर कुछ आमदनी की जा सकती है। इसके लिए दलहनी फसलें या ऐसी सब्जियां जिसमें कीट/रोगों का आक्रमण कम होता हो, उगाना उपयुक्त होता है। दलहनी फसलों में मूंग, मटर, उड़द, लोबिया और चना आदि उगाकर आमदनी बढ़ने के साथ जमीन की उर्वरा शक्ति

को भी बढ़ाने में मदद मिलती है।

फलों का फटना :– कागजी नींबू में वर्षा के मौसम में अक्सर फल फटने की समस्या देखी जा सकती है। फल प्राय: उस समय फटते हैं, जब शुष्क मौसम में अचानक वातावरण में आर्द्रता आ जाती हैं। अधिक सिंचाई या सूखे के लंबे अंतराल के बाद वर्षा का होना भी फल फटने का मुख्य कारण है। प्रारंभिक अवस्था में फलों पर छोटी दरारें बनती है, जो बाद में फलों के विकास के साथ बड़ी हो जाती हैं। इससे आर्थिक रूप से बहुत अधिक नुक्सान होता है। फलों को फटने से रोकने के लिए:

* उचित अंतराल पर सिंचाई करें।

* जिब्रेलिक अम्ल 40 पी.पी.एम. या एन.ए.ए. 40, पी.पी.एम. या पोटेशियम सल्फेट 8 प्रतिशत घोल।

* छिड़काव अप्रैल, मई एवं जून में करें।

सारणी 1. खाद एवं उर्वरकों की मात्रा

पौधे की आयु (वर्ष)	गोबर की खाद (कि.ग्रा.)	यूरिया (ग्राम)	सिंगल सुपर फॉस्फेट (ग्राम)	म्यूरेट ऑफ पोटाश (ग्राम)
1 वर्ष	10	125	250	–
2 वर्ष	20	250	500	–
3 वर्ष	30	375	750	200
4 वर्ष	40	500	1000	200
5 वर्ष और अधिक	50	625	1250	400

तुड़ाई एवं उपज :– फलों की तुड़ाई का सही समय उगाई जाने वाली किस्म एवं मौसम पर निर्भर करता है। कागजी नींबू के फल 150-180 दिनों में पक्कर तैयार हो जाते हैं। फलों का रंग जब हरे से हल्का पीला होना शुरू हो जाए तो, फलों की तुड़ाई प्रारंभ कर देनी चाहिए। फलों को तोड़ते समय यह ध्यान रखें कि फलों के छिलके को किसी प्रकार का नुक्सान न पहुंचे। कागजी नींबू की किस्म, मौसम और प्रबंधन इत्यादि पर निर्भर करती है। सामान्यत 1000-1200 फल प्रति पौधा प्रति वर्ष मिल जाते हैं।

प्रमुख कीट एवं रोग :– नींबू में कई तरह के कीटों एवं रोगों का आक्रमण होता है। यदि सही समय पर इनकी पहचान करे उचित प्रबंधन नहीं किया जाये तो किसानों को बहुत आर्थिक नुक्सान उठाना पड़ता है। कागजी नींबू में लगने वाले कुछ हानिकारक कीट एवं रोग निम्नलिखित है:

कीट नियंत्रण :– * मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. एक मि.ली. या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

* पौधों की संख्या अधिक नहीं हो तो लटों को पौधों से चुनकर मृदा में दबा दें अथवा मिट्टी के तेल में डालकर मार दें।

लीफ माईनर :– इस कीट के लार्वा (सुंडी) पत्ती की निचली सतह पर चांदी के समान चमकीली, टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगें बना देते हैं। इससे प्रभावित पत्तियों के किनारे अंदर की तरफ मुड़कर सूखने लग जाते हैं। इसका प्रकोप भी नई पत्तियों पर अधिक होता है, जिससे पौधे की वृद्धि रूक जाती हैं। कीटों की संख्या अधिक होने पर ये लक्षण पत्ती के ऊपरी भाग पर भी दिखाई देते हैं। यह नींबू में कैंकर रोग के फैलाव में भी सहायक होता है।

कीट नियंत्रण :– 750 मि.ली. ऑक्सीडेमेटान मिथाईल (मेटासिस्टाक्स) 25 ई.सी. या 625 मि.ली. डाइमेथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस (न्यूवाक्रान / मोनोसिल) 36 डब्ल्यू, एस.सी. को 500 लीटर पानी में प्रति एकड़ की दर से छिड़कें।

* अधिक प्रकोप होने की दशा में प्रभावित भागों को काटकर नष्ट कर दें एवं उसके पश्चात दवा का छिड़काव करें।

* बगीचे को हमेशा साफ-सुथरा रखें।

शेष पृष्ठ 8 पर

बाजरा की उन्नत फसल

अच्छी पैदावार के लिए मुख्य सुझाव

ऐसे किसानों जोकि विपरीत परिस्थितियों एवं सीमित वर्षा वाले क्षेत्रों तथा बहुत कम उर्वरकों की मात्रा के साथ, जहां अन्य फसलें अच्छा उत्पादन नहीं दे पाती, के लिए वहां पर बाजरा की खेती की जा सकती है। बाजरा फसल जो गरीबों का मुख्य स्त्रोत है - ऊर्जा, प्रोटीन, विटामिन एवं मिनरल का। शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में मुख्य रूप से उगाई जाती है। यह इन क्षेत्रों के लिए दाने एवं चारे का मुख्य स्त्रोत माना जाता है। बाजरा सूखा सहनशील एवं कम अवधि वाली फसल है, जिसे लगभग सभी प्रकार की भूमियों में उगाया जा सकता है। हरियाणा में बाजरा क्षेत्र एवं बाजरा उत्पादन में एक महत्वपूर्ण फसल है। जहां पर 500-600 मिलीमीटर वर्षा प्रति वर्ष होती है, जोकि देश के शुष्क पश्चिम एवं उत्तरी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त रहता है। खाद्यान्न पोषण अध्ययन के अनुसार भारत वर्ष के 3 साल तक के बच्चे यदि 100 ग्राम बाजरा के आटे का सेवन करते हैं, तो यह आपकी प्रति दिन की आयरन (लौह) की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है तथा आटा विशेषज्ञ अनुसार महिलाओं के लिए खून की कमी को पूरा करने का एक आसान साधन है। भारतवर्ष में ही नहीं अपितु संसार में महिलाओं एवं बच्चों में आयरन (लौह) एवं मिनरल (खनिज लवण) की कमी पाई जाती है, जिसकी कमी को बाजरे से बने व्यंजनों से पूरा किया जा सकता है।

भूमि का चुनाव एवं खेत की तैयारी : बाजरा को कई प्रकार की भूमियों काली, रेतीली, दोमट एवं लाल मृदाओं में सफलता से उगाया जा सकता है और पानी के निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। बाजरा का बीज बारीक होने के कारण खेत को अच्छी तरह से तैयार करना चाहिए। एक गहरी जुताई के बाद 2-3 बार हल से जुताई कर खेत को समतल करना चाहिए, जिससे खेत में पानी ना रुक सके, साथ में पानी के निकास की उचित व्यवस्था की जानी चाहिए। दीमक के प्रकोप की संभावना होने पर प्रति एकड़ 1-1.5 लीटर क्लोरोपायरीफॉस 25 किलोग्राम रेत में मिला कर खेत में डालने के बाद पलेवा कर दें।

बुवाई का तरीका : वर्षा प्रारम्भ होते ही बाजरे की लाइनों में 2-3 सैंटीमीटर गहराई पर बुवाई करनी चाहिए। लाइन से लाइन 45 सैंटीमीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सैंटीमीटर उपयुक्त होती है।

बुवाई का समय : बुवाई का उचित समय 1 जुलाई से 15 जुलाई है। प्री-मौनसून वर्षा यदि 50 मिलीमीटर हो जाती है, तो 15 जून के बाद भी बुवाई की जा सकती है। बीज की मात्रा डेढ़ किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से बिल्कुल सही है।

किस्मों का चुनाव : विभिन्न प्राकृतिक अवस्थाएं सिंचित और असिंचित है। इसके लिए हरियाणा प्रदेश में निम्नलिखित किस्मों का प्रयोग करें : सिंचित क्षेत्रों में एच.एच.बी.-94, एच.एच.बी.-117, एच.एच.बी.-197, एच.एच.बी.-223 का चुनाव करें। बारानी क्षेत्रों में एच.एच.बी.-67, संशोधित एच.एच.बी.-216, एच.एच.बी.-197, एच.एच.बी.-117 तथा मुख्य कम्पनियों के हाईब्रिड बीजों का चुनाव करें।

मुख्य फसल-चक्र : बाजरा-जौ बाजरा-गेहूं / बाजरा-चना / बाजरा-सरसों होता है।

अन्तवर्तीय (Intercroping) फसलें : अन्तवर्तीय फसलें जैसे बाजरा की दो पंक्तियों के बीच में दो लाइन मूंग की लगाने से मूंग की लगभग 2 क्विंटल प्रति एकड़ तक अतिरिक्त उपज मिलती है। बाजरा की दो लाइन के बीच में 3 लाइन लोबिया की लगाने से, इससे 45 दिन के अंदर 40-45 क्विंटल प्रति एकड़ तक अतिरिक्त हरा चारा मिल जाता है।

पौधे रोपण : बाजरा की समय से बोनी का ना हो पाना, उसके लिए कई कारण उत्तरदायी हो सकते हैं। जैसे मौनसून का देर से आना, भारी एवं लगातार वर्षा का बोनी के उपयुक्त समय पर होना अथवा गर्मी की फसल देर से कटाई आदि। इन परिस्थितियों में बाजरा की पौध रोपण करना ज्यादा उत्पादन देता है, बजाय सीधी बीज बुवाई के। पौध रोपण के निम्न लाभ होते हैं। पौध रोपण से फसल शीघ्र पक जाती है तथा देरी से कम तापमान का प्रभाव दाने बनने पर नहीं पड़ता तथा अच्छी बढ़वार के कारण अधिक फुटाव एवं टीलर निकलते हैं। पौधे की संतुलित संख्या रख सकते हैं। रोपे हुए पौधे अच्छी वृद्धि करते हैं, क्योंकि लगभग तीन सप्ताह पुराने पौधे लगातार वर्षा स्थिति को अच्छी तरह से सहन कर सकते हैं। डाऊनी मिल्ड्यू (सफेद चूर्ण) से प्रभावित पौधे को लगाने के समय उनको निकाला जा सकता है।

पौध रोपण के लिए नर्सरी तैयार करना : एक हैक्टेयर भूमि के लिए 2 किलोग्राम बाजरा को 200-300 वर्ग मीटर क्षेत्रफल में बोना चाहिए। बीज को 1.2 मीटर × 7.50 मीटर (चौड़ाई × लम्बाई) क्यारियों में 10 सैंटीमीटर दूरी एवं 1.5 सैंटीमीटर की गहराई पर बोना चाहिए। पौधे की अच्छी बढ़वार के लिए नर्सरी में 25-30 किलोग्राम कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट का प्रयोग करते हैं। नर्सरी से पौधों को तीन सप्ताह बाद उखाड़ कर खेत में रोपण कर देना चाहिए। साथ ही पौधे को उखाड़ते समय नर्सरी की क्यारियां गीली होनी चाहिए, जिससे पौधों को उखाड़ते समय उनकी जड़ें प्रभावित ना होने पाएं। पौधे को उखाड़ने के बाद बढ़वार बिन्दू से ऊपर के भाग को तोड़ देते हैं, जिससे कम से कम वाष्पोत्सर्जन (transpiration) हो सके। साथ ही साथ रोपण उस दिन करना चाहिए, जिस दिन वर्षा हो रही हो। यदि वर्षा नहीं हो रही, तो खेत में सिंचाई कर देनी चाहिए, जिससे पौध आसानी से रोपित हो सकें। एक छेद में एक पौधे को 50 सैंटीमीटर की दूरी तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सैंटीमीटर रखते हैं। जुलाई के तीसरे सप्ताह से लेकर अगस्त के दूसरे सप्ताह तक रोपाई कर देनी चाहिए।

खाद व उर्वरक : बुवाई से पहले 15 किलोग्राम नत्रजन, 40 किलोग्राम डी.ए.पी. और 15 किलोग्राम पोटाश प्रति एकड़ डालना चाहिए। बुवाई के लगभग 30 दिन पर शेष बची 35 किलोग्राम नत्रजन प्रति एकड़ डाल दें। उर्वरकों की उचित मात्रा सदा बीज के नीचे 4-5 सैंटीमीटर गहराई पर बोते हैं।

बाजरे में खरपतवार नियंत्रण हेतु उपाय : एट्राजीन 400 ग्राम मात्रा बुवाई के 3 दिन के अंदर तथा 20-25 दिन पर निराई-गुड़ाई बैलों द्वारा संचालित 'व्हील हो' अच्छी तरह से किया जा सकता है।

सिंचाई : बाजरा एक वर्षा आधारित फसल है। इसलिए इसको पानी सिंचाई की कम ही ज़रुरत होती है। जब वर्षा ना हो, तब फसल की सिंचाई करनी चाहिए। साधारणतः फसल को सिंचाईयों की इसकी बढ़वार के समय आवश्यकता होती है। यदि सिट्टे निकलते समय कम नमी है, तो इस समय सिंचाई की ज़रुरत पड़ती है, क्योंकि उस स्तर पर नमी की बहुत आवश्यकता होती है। बाजरा की फसल अधिक देर तक पानी भराव को सहन नहीं कर सकती, इसलिए पानी के निकास का विशेष प्रबंध करना चाहिए।

कीट एवं बीमारियां और नियंत्रण के उपाय :

1. तना छेदक, सफेद लट, बालों वाली सुंडियां (केटर पिलर, भूंडी, ब्लिस्टर, बीटल, ईयर हैड) : प्रारम्भिक अवस्था में कीट प्रभावित पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए। NSKE (नीम आधारित)/5 प्रतिशत का छिड़काव कम से कम 2 बार करना, जिससे कीटों की संख्या कम हो सके। निमाटोड नियंत्रण हेतु नीम खली / 80 किलोग्राम प्रति एकड़ इस्तेमाल करें। तना छेदक मक्खी के अधिक प्रकोप होने पर, इसके नियंत्रण हेतु कार्बोफ्यूरॉन 3जी/3-4 किलोग्राम प्रति एकड़ या मोनोक्रोटोफॉस (36 एस.एल.) की 250-300 मिलीलीटर मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से 200-250 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें।

2. डाऊनी मिल्ड्यू (कोढ़िया) : प्रतिरोधी किस्मों का चुनाव करें तथा बीजों का उपचार 2 ग्राम एमिसान 4 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीज से उपचारित कर बुवाई करें। प्रभावित पौधों को देख कर उखाड़ना, 30 दिन फसल अवधि पर 0.2 प्रतिशत मैंकोज़ेब / ज़ाइनेब का छिड़काव डाऊनी मिल्ड्यू नियंत्रण हेतु व 50 प्रतिशत फूल बनने पर करें।

3. अरगट (चेपा) : रोग ग्रसित बालों से हल्के गुलाबी रंग का चिपचिपा पदार्थ टपकने लगता है, जो बाद में गहरा भूरा हो जाता है। कुछ दिनों बाद दानों के स्थान पर गहरे भूरे रंग के पिंड बन जाते हैं। चिपचिपा पदार्थ व पिंड दोनों ही पशु और मनुष्य के लिए हानिकारक (ज़हरीले) होते हैं।

4. कांगियारी (Smut) : बालों की शुरू की अवस्था में जगह-जगह रोग ग्रसित दाने बनते है, जो आकार में बड़े चमकदार व गहरे रंग के होते हैं। बाद में यह भूरे रंग के हो जाते हैं। अंत में इनमें काले रंग का पाउडर सा भर जाता है, जो रोगजनक फफूंद के जीवाणु होते हैं।

रोकथाम के सामूहिक उपाय : बीज का भली-भांति निरीक्षण करें और देखें कि उसमें अरगट के पिंड ना हों। यदि बीज किसी प्रमाणित संस्था से ना लिया गया हो तो अरगट के पिंड हाथ से चुन कर बाहर निकाल दें। यदि किसान अपना ही बीज प्रयोग में ला रहा है, तो पिंड को हाथ से निकाल दें और नमक के घोल में बीज को डुबो कर निकाल दें। उपरोक्त विधि में 10 प्रतिशत नमक के घोल में बीज को डाल कर 10 मिनट तक चलाएं और ऊपर तैरते हुए पिंडों को निकाल दें। बाद में जला कर नष्ट कर दें। घोल में नीचे बैठे भारी स्वस्थ बीजों को बाहर निकाल लें और साफ पानी से अच्छी तरह धो लें, जिससे कि बीज की सतह पर कोई नमक का अंश ना रहने पाए। यदि कोई नमक का अंश बीज की सतह पर किसी कारणवश रह जाता है, तो उसमें बीज के अंकुरण पर बुरा प्रभाव पड़ता है। अंत में घुले हुए सारे बीज को छाया में सुखा दें। उपरोक्त बीज को बोने से पहले 2 ग्राम एमिसान तथा 4 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीज से सूखा उपचार कर बुवाई कर दें।

रोग ग्रसित पौधों को निकालना : पत्तों पर जैसे ही डाऊनी मिल्ड्यू रोग के लक्षण दिखाई पड़ते हैं, तो उन्हें उखाड़ कर नष्ट कर दें। उखड़े हुए रोग ग्रसित पौधों का सम्पर्क स्वस्थ पौधों से ना हो पाए। यह काम बुवाई के 20 दिन के अंदर अवश्य ही करना चाहिए। मध्यम से अधिक पौधे निकाल देने की सूरत में वहां स्वस्थ पौधे रोप दें। रोग ग्रसित किस्मों में, रोग ग्रसित पौधे को निकालने के बाद फसल पर 0.2 प्रतिशत ज़ाइनेब या मैन्कोज़ेब के घोल का छिड़काव करें।

छिड़काव कार्यक्रम : फसल के पत्तों से बालें बाहर आने वाली अवस्था में बालों पर 400 मिलीलीटर क्यूमान एल का 200 लीटर पानी का घोल बना कर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

अन्य कार्यक्रम भी अपनाएं :

1. अरगट से प्रभावित बालियों को जला कर नष्ट कर दें तथा ऐसे पौधों या दानों को ना तो पशुओं को खिलाएं और ना ही प्रयोग में लाएं।

2. बीमारी की अधिकता वाले क्षेत्रों में 3 से 4 साल का फसल-चक्र अपनाएं।

3. अगेती या समय पर बोई गई फसल को अरगट कम लगता है।

4. फसल काटने के बाद खेत में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर दें ताकि अरगट के सकलोरेशिया, डाऊनी मिल्ड्यू के जीवाणु आदि मिट्टी की तह में ही नष्ट हो जाते हैं।

5. अरगट से प्रभावित फसल के दानों को खाने के प्रयोग में लाने से पूर्व अनाज से अरगट के पिंड को निकाल दें।

6. धूमर तथा लिपटन घास खेत की मेढ़ों तथा बाजरा के खेत के आस-पास ना होने दें।

कटाई एवं भण्डारण : फसल पूर्ण रूप से पकने पर कटाई करें। फसल के ढेर को इकट्ठा कर तथा फिर सूखने पर थ्रैशिंग करें। दानों को धूप में अच्छी तरह सुखा कर भण्डारित करें।

उपज : वैज्ञानिक तरीके से सिंचित अवस्था में खेती करने पर 30-35 क्विंटल दाना व 40-60 क्विंटल प्रति एकड़ सूखी कड़वी मिल जाती है।

हाईब्रिड किस्मों को लगाने पर तथा वैज्ञानिक तरीके से प्रबंधन करने पर 15-20 क्विंटल तक उपज प्राप्त होती है। वर्षाधारित खेती में 9-15 क्विंटल तक दाना तथा 40-50 क्विंटल तक सूखी कड़वी प्राप्त होती है।

सहजन पशुओं के लिए चारे का वैकल्पिक स्त्रोत

पशुधन क्षेत्र के विकास के लिए पर्याप्त, पौष्टिक फीड और चारा की नियमित आपूर्ति आवश्यक है। चारा फसल पशुधन के लिए फीड का मुख्य और सबसे सस्ता स्त्रोत है। गुणवत्तायुक्त चारा की कमी, विशेष रूप से हरा चारा की कमी के दौरान पशुधन उत्पादकता को कम करने में प्रमुख कारक है। वर्तमान में देश में 35.6 प्रतिशत हरा चारा, 10.95 प्रतिशत शुष्क चारा और 44 प्रतिशत दाना मिश्रण की कमी है। आगे आने वाले वर्षो में चारा की हरी और सूखा चारा मांग 1012 और 631 मिलियन टन तक पहुंच जाएगी। इसलिए इस कमी को पूरा करने के लिए पशुपालन को बनाए रखने के लिए चारा आपूर्ति 1.69 प्रतिशत सालाना बढ़ती चाहिए।

पिछले दो दशकों से हरा चारा के तहत क्षेत्र केवल 8.4 मीटर हैक्टेयर (5 प्रतिशत से कम) है, जो स्थिर है। ऊर्जा, प्रोटीन और खनिजों तथा चबाने के लिए रेशा (फाईबर) प्रदान करने में पशुओं के चारा मांग को पूरा करने के लिए वृक्ष द्वारा चारा (फोडर्स) एक अच्छा विकल्प हो सकता है। शोध प्रयासों में पशु पोषण के वैकल्पिक स्त्रोत प्रदान करने के लिए ब्राउजिंग पौधों की क्षमता की पुष्टि की गई है। जिसकी एक बड़ी सूची हैं, जो 300 से अधिक प्रजातियों तक भी जा सकती है। ऐसा एक पेड़ जो पशुओं के लिए चारा देता है वह सहजन (मोरिंगा) है, जिसे लोकप्रिय रूप से ड्रमस्टिक पेड़ के नाम से जाना जाता है और इसकी जड़ों के स्वाद के लिए हॉर्सरैडिश पेड़ भी कहा जाता है। वैज्ञानिक रूप से यह पेड़ मोरिंगा ओलीफेरा के रूप में बुलाया जाता है। यह तेजी से बढ़ते पेड़ गर्म प्रदेशों में बहुतउद्देशीय उपयोग के लिए उगाया जाता है जैसे कि मानव भोजन, पशुधन फोरेज, औषधीय गुण, डाई, जल शोधन तथा इसकी व्यापक अनुकूलता और आसानी से स्थापित होने के कारण। सहजन की पत्तियों में बीटा कैरोटीन, प्रोटीन, विटामिन सी, कैल्शियम, मैग्नीशियम और लौह की अच्छी मात्रा होती है। चूंकि सहजन की पत्तियां प्रोटीन में समृद्ध होती हैं। इसलिए दुधारू पशुओं के लिए पूरक चारा के रूप में उपयोग किया जा सकता है। इसके अलावा इसकी पत्तियों में पशुओं को दी जाने वाली पारंपरिक प्रोटीन की खुराक जैसे नारियल का खल, कपास खल, तिल खल, सूरजमुखी खल इत्यादि की तुलना में अधिक प्रोटीन पाया जाता है। इसके साथ पत्तियों में कई फफूंद प्रजातियों जैसे ई-कोलाई के खिलाफ एंटी ऑक्सीडेंट और एंटीमाईक्रोबियल गुण होते हैं।

पोषण प्रोफाईल :- फॉस्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम जैसे खनिज तत्व पशुधन के शारीरिक चयापचय और पशुधन की जैव रासायनिक प्रक्रियाओं को संतुलित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। दूध देने वाले पशु दुग्ध उत्पादन के दौरान मैग्नीशियम की कमी से ग्रस्त हैं, जो की उत्पादन में कमी का कारण बनता है। सहजन की पत्तियों में उच्च मात्रा में मैक्रोन्यूट्रिएंट्स मैग्नीशियम और पोटेशियम होते हैं और इन्हें अन्य चारा या घास के साथ मिलाकर पशुओं के आहार और पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रभावी ढंग से उपयोग किया जा सकता है।

चारा उत्पादन क्षमता :- सहजन का उत्पादन क्षमता जलवायु की स्थितिए दूरी, काटने की ऊंचाई, रोपण विधि और काटने किन आवृत्ति से प्रभावित होता है। उच्चतम फसल विकास दर संकीर्ण दूरी में होती है। सहजन पौधों की दूरी 30×40 सैं.मी. पर उच्च चारा पैदावार प्राप्त की जाती है। बरसात के मौसम में 150 सैं.मी. की ऊंचाई पर 4 से 6 सप्ताह के अंतराल पर फसल की कटाई उच्चतम पैदावार देती है। वहीं सूखे मौसम में 12 सप्ताह की फसल अंतराल पर 100 सैं.मी. की ऊंचाई पर कटाई बायोमास उपज देता है। औसतम 4.2 से 8.3 टन प्रति हैक्टेयर शुष्क पदार्थ उपज प्राप्त की जा सकती है।

दूध उत्पादन और वृद्धि पर सहजन चारा का प्रभाव :- सहजन के ताजे पत्ते पशुओं के

भारत में दुनिया की सबसे ज्यादा पशुधन आबादी हैं, जो प्रति वर्ष 4.8 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है। उसी के अनुसार इस तरह की एक बड़ी पशुधन आबादी को खिलाने के लिए देश की फीड आवश्यकता भी साथ में बढ़ रही हैं।

लिए आहार घटक में शामिल किया जा सकता है। अनुसंधान द्वारा यह पाया गया है की सहजन खिलाने से बकरी के खाने के व्यवहार, भेड़ में शारीरिक वृद्धि दर और दुधारू गायों में दूध उत्पादन में सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सहजन के पत्तों का आहार, मछली के आहार, अंडे देने वाली मुर्गी और संकर नस्ल डुयरी गायों के आहार में शामिल किया जा सकता है। बकरियों की फीड में सहजन को पूरक आहार के रूप पर खिलाने पर 20.83 ग्राम/पशु/दिन का उच्चतम औसत वजन में वृद्धि पाया गया, साथ ही यह प्रोटीन का कुशलतापूर्वक पशुओं द्वारा उपयोग कराने में सहायक है। सहजन में प्रोटीन और नाईट्रोजन उपयोगिता अथवा पोषक तत्व पाचन की उच्चतम दक्षता है। यह पशुओं के दूध उत्पादन में सुधार करता है, क्योंकि इसमें अच्छी रूमेन बाईपास प्रोटीन विशेषताएं होती हैं। वास्तव में सहजन पत्तों का आहार अन्य खल के समान एक विकल्प के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

उत्पादन के संभावित क्षेत्र :- कम रखरखाव, कम लागत आवश्यकताओं के कारण और अच्छी गुणवत्ता वाले चारे प्रदान करने की क्षमता के कारण यह पेड़ चारा उत्पादन की नजर से ये पेड़ अधिक ध्यान प्राप्त कर रहा है। सहजन सबसे अच्छा पौष्टिक पेड़ है, जो सूखे मौसम के दौरान पशुओं के लिए पर्याप्त चारा प्रदान कर सकता है। एक बार उनकी जड़ों को विकसित और स्थापित करने के बाद यह सूखे स्थितियों में लगातार कटिंग के लिए भी प्रतिरोधी है। यह तेजी से बढ़ने वाला पेड़ हैं जिसमें छंटनी के बाद पुन: विकास की क्षमता और प्रति इकाई क्षेत्र अच्छी गुणवत्ता वाले उच्च पत्ती बायोमास का उत्पादन करने की क्षमता है और सूख मौसम के दौरान 6 महीने तक लंबे सूख अवधि को सहन कर सकता है और वार्षिक वर्षा 250-1500 मिलीमीटर प्रति वर्ष के बीच तथा तापमान 19 से 28 डिग्री सेल्सियस तक के साथ अच्छी तरह से बढ़ सकता है।

पशु फीड के रूप में सहजन के लाभ :- सहजन की पत्तियों और हरा तना के साथ अपने पशुओं को खिलाने से पशुओं के वजन में 32: की वृद्धि हो सकती हैं और दूध उत्पादन में 43.65 प्रतिशत बढ़ोत्तरी होती है। सहजन अन्य खाद्य पदार्थो के पाचन और उनके स्वास्थ्य में सुधार करता है।

गाय/भैंस के लिए चारा पूरक :- सहजन की पत्तियों के साथ फीड मिलाकर खिलाने से 43.65 प्रतिशत दूध उत्पादन में वृद्धि कर सकते हैं, साथ ही पशुओं में 32 प्रतिशत दैनिक शारीरिक वजन बढ़ा सकते हैं। सहजन को एक बड़ी फसल के रूप में बड़े पैमाने पर उगाया जा सकता है।

* एक एकल पौधा कई सालों तक रहता है।

* साथ ही अनुसंधान द्वारा ये भी पाया गया है कि प्रतिवर्ष उत्पादित सिंचित और अच्छी तरह से उर्वरित भूमि से साल में 9 बार इससे फसल लिया जा सकता है।

* 650 से 700 मीट्रिक टन सहजन हरा चारा, 100 से 110 मीट्रिक टन सूखा चारा के बराबर, 17.5 मीट्रिक टन शुद्ध प्रोटीन, 7000 किलोग्राम लिपिड, 65 प्रतिशत ओमेगा .3 फैटी एसिड के साथ 10 मीट्रिक टन किण्वित शक्कर लगभग 8 मीट्रिक टन स्टार्च और लगभग 45 मीट्रिक टन हेमिसेल्यूलोज और सेलूलोज के बराबर पाया गया है।

निष्कर्ष :- पोषक तत्वों और चयापचय ऊर्जा के समृद्ध स्त्रोत मोरिंग पशुधन के लिए वैकल्पिक चारा के रूप में माना जा सकता है। इसे उष्णकटिबंधीय जलवायु क्षेत्रों में उगाया जा सकता है साथ ही इसे मिट्टी पोषक तत्वों और पानी की कम मांग होती हैं। डेयरी-खेती प्रणाली में यह अतिरिक्त प्रयासों के बिना वर्ष भर में हरा चारा उपलब्धता को बनाए रख सकता है। इसकी बहुमुखी प्रकृति इसे विभिन्न फसल प्रणालियों में उपयुक्त बनाती है, क्योंकि इसे एग्रोफोरेस्ट्री सिस्टम में गली फसल प्रणाली में फसल या पेड़ की बाड़ के रूप में उगाया जा सकता है और तक कि उच्च तापमान और कम पानी की उपलब्धियों वाले सीमांत भूमि पर भी लगाया जा सकता है जहां अन्य कृषि खेती करना कठिन होता है।

शेष पृष्ठ 6 की

कागजी नींबू की खेती

सिट्रस सिल्ला :- इस कीट के शिशु एवं वयस्क दोनों ही नई पत्तियों तथा पौधों के कोमल भागों से रस चूसते हैं। इसके परिणाम-स्वरूप प्रभावित भाग नीचे गिर जाते हैं और धीरे-धीरे टहनियां सूखने लग जाती हैं। ये कीट सफेद शहद जैसा चिपचिपा पदार्थ भी स्त्रावित करते है, जिसमें फफूंद का आक्रमण बढ़ जाता है। यह चिपचिपा पदार्थ जहरीला होता है, जिसके कारण पत्तियां सिकुड़ जाती हैं और फिर ये नीचे गिर जाती हैं। इसका प्रकोप भी वर्षा एवं बसंत ऋतु में अधिक होता है। यह कीट 'ग्रीनिंग' नामक रोग फैलाने में भी सहायक होता है।

कीट नियंत्रण : * पौधे के ग्रसित भागों को काटकर दबा दें अथवा जला दें।

* फरवरी-मार्च, जून-जुलाई तथा अक्तूबर-नवंबर में या कल्लिका फूटते ही मोनोक्रोटोफॉस 0.7 मि.ली. या डायमेथोएट 0.8 मि.ली. या क्विनॉलफॉस 1 मि.मी. या एसीफेट 1 ग्राम दवा का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यकता हो तो यह

छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर पुन: दोहरायें।

* कभी भी बगीचे के आसपास मीठे नीम का पौधा नहीं लगायें।

फल एवं फूलों का झड़ना :- वैसे तो नींबू के पौधों पर फूल बहुतायत में आते हैं तथा फल भी अच्छी संख्या में ही बनते हैं। परंतु-कई बार यह देखा गया है कि पुष्प या फल काफी संख्या में परिपक्व होने से पूर्व गिर जाते हैं। यह समस्या कई कारणों से आ सकती है, जिसमें पोषक तत्वों की कमी, कीट-रोगों का आक्रमण, वातावरणीय कारक, सिंचाई इत्यादि प्रमुख हो सकते हैं। फूल व फलों को झड़ने से बचाने के लिए कुछ प्रमुख उपाय निम्न हैं:

* पुष्प बनते समय सिंचाई कदापि न करें।

* संतुलित मात्रा में पोषक तत्वों का प्रयोग करें।

* फलों के झड़ने की समस्या के समाधान के लिए आरियोफिंजिन + 2,4-डी+ जिंक सल्फेट के तीन छिड़काव, जोकि फल बनने के बाद, मई व इसके एक महीने के बाद करें। इसके लिए 12 ग्राम आरियोफिंजिन + 6 ग्राम 2,4-डी+3 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट और 1.5 कि.ग्रा. चूने को 550 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

बगीचे की स्थापना :- नीबू के पौधे 6×6 या 5×5 मीटर की दूरी (कतार से कतार व पौधे से पौधे) पर लगाए जाते हैं। इस दूरी की दर से प्रति हैक्टेयर क्षेत्रफल में लगभग 277 से 400 पौधे लग जाते हैं। सर्वप्रथम जिस खेत में पौधे लगाने है उसकी अच्छी तरह जुताई करके समतल कर लें। उसके पश्चात उचित दूरी पर रेखांकन करके उन स्थानों पर 3×3×3 फुट व्यास के गड्ढों की खुदाई करें। गड्ढों से निकली ऊपरी भाग की मृदा में प्रत्येक गड्ढे की दर से 15-20 कि.ग्रा. गोबर की खाद मिलाकर गड्ढों को भर दें। दीमक की रोकथाम के लिए क्लोरोपायरीफॉस 20 मि.ली. दवा प्रति गड्ढे की दर से पानी में मिलाकर डालें। गड्ढा भरते समय ध्यान रखें कि यह धरातल से 15-20 सैं.मी. ऊपर उठा हुआ हो। गड्ढा भरने के बाद सिंचाई कर दें अथवा वर्षा का इंतजार करें, जिससे पानी से गड्डे की मृदा नीचे बैठ जाए। पौधों का रोपण मौनसून के समय (जुलाई-अगस्त) में करते हैं, परंतु सिंचाई की पर्याप्त सुविधा होने पर यह कार्य फरवरी-मार्च में भी कर सकते हैं।

गर्मियों में दुधारू पशुओं का उचित प्रबंध

हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है तथा पशु-पालन साधारण कृषि का एक महत्वपूर्ण अंग है, जोकि देश की अर्थव्यवस्था में मुख्य भूमिका अदा करता है। पिछले कुछ वर्षों से देश की कुल आय में कृषि का योगदान घट रहा है, वहीं पर पशु-पालन से इसमें निरंतर वृद्धि हो रही है।

देश का उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र सदियों से पशु-पालन व दूध उत्पादन के लिए विख्यात रहा है। इस क्षेत्र में दुग्ध उत्पादन के लिए दुधारू पशु पाले जाते हैं, जिसमें गायों (देसी व संकर नस्ल) व भैंसों की मुख्य भूमिका है। देश के उत्तर-पश्चिमी भाग में होने के कारण इस क्षेत्र में मौसम (जलवायु) की विषमताएं अत्याधिक देखने को मिलती हैं। यहां गर्मियां तेज़ व अधिक समय तक होती हैं। गर्मियों के मौसम में वायुमंडलीय तापमान 45 डिग्री सैल्सियस से भी अधिक हो जाता है। ऐसा मौसम दुधारू पशुओं पर अपना अत्याधिक दुष्प्रभाव डालता है। भैंसों में यह दुष्प्रभाव अधिक देखने को मिलता है। उनके शरीर का काला रंग तथा बालों की कमी ऊष्मा को अधिक अवशोषित करती है। इसके अतिरिक्त भैंसों में पसीने की ग्रन्थियां गायों की अपेक्षा बहुत कम होती हैं, जिसके कारण उनको अपने शारीरिक तापमान को कम करने में काफी परेशानी होती है।

गर्मियों में दुधारू पशुओं पर पड़ने वाले मुख्य दुष्प्रभाव इस प्रकार हैं :

1. गर्मियों में जब वायुमंडलीय तापमान पशुओं के शारीरिक तापमान से अधिक (40 डिग्री सैल्सियस) हो जाता है, तो पशु ऊष्मा का शरीर में कम उत्पादन करते हैं। इसके लिए पशु सूखा चारा खाना कम कर देते हैं, क्योंकि सूखे चारे को पचाने में शरीर में ऊष्मा को उत्पादन अधिक होता है। अधिक गर्मी होने के कारण कम चारा खाना उनकी दुग्ध उत्पादन के लिए आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध नहीं हो पाते हैं।

2. गर्मियों में शरीर की ऊष्मा को निकालने व अपने शारीरिक तापमान को स्थिर रखने के लिए पशु शरीर से पानी का पसीने के रूप में वाष्पीकरण करता है। पानी को शरीर से वाष्पित होने के लिए पशु के शरीर से ऊष्मा लेनी पड़ती है, जिससे पशु के शरीर का तापमान कम हो जाता है व पशु राहत महसूस करता है। पशु अपनी श्वसन क्रिया को बढ़ा कर पानी की वाष्पीकरण क्रिया को बढ़ावा देते हैं। इन सब के कारण पशु को पानी की आवश्यकता गर्मियों में बढ़ जाती है।

3. गर्मियों के मौसम में दुधारू पशुओं के दुग्ध उत्पादन में गिरावट आ जाती है, जिसका मुख्य कारण चारे की उपलब्धता व गुणवत्ता में कमी व पशुओं का गर्मियों में कम चारा खाना है। इसके अतिरिक्त पशु अपनी शारीरिक ऊर्जा को उत्पादन की बजाय अपने शारीरिक तापमान को सामान्य (38.6 डिग्री सैल्सियस) बनाए रखने के लिए उपयोग में लाता है, जिससे पशुओं को उत्पादन हेतु पर्याप्त ऊर्जा उपलब्ध नहीं हो पाती व उनके दुग्ध उत्पादन में कमी आ जाती है।

4. किसान भाई जैसा जानते भी है कि मादा पशु सामान्यत: एक निश्चित समय 21 दिन के अंतराल में गर्मी या मदकाल में आती हैं। इस मदकाल का समय लगभग 24-36 घंटे तक रहता है। इस समय मादा पशु कुछ मदकाल के लक्षण प्रकट करती हैं। जब यह निश्चित हो जाए कि अमुक गाय या भैंस मदकाल में है, तो यथा समय उस पशु का गर्भाधान करवाना चाहिए।

गर्मियों में भैंसों व संकर नस्ल की गायों की प्रजनन क्रिया क्षीण (मंद) हो जाती है। उनका मद-चक्र अवस्था का काल लम्बा हो जाता है एवं मद अवस्था का काल एवं उग्रता दोनों ही मध्यम पड़ जाती है। ऐसी स्थिति में बहुत से पशु-पालक अपने पशुओं में मदकाल की ठीक से पहचान नहीं कर पाते व समय पर गर्भधान नहीं करता है। इस कारण उनके पशुओं की पहले ब्यांत की आयु अधिक हो जाती है। इसी तरह एक ब्यांत से दूसरे ब्यांत में अन्तर का समय भी बढ़ जाता है। परिणाम स्वरूप गाय व भैंसें काफी समय तक दूध दिए बगैर रहती हैं, जिससे पशु-पालकों को अत्याधिक आर्थिक हानि होती है।

5. अत्याधिक गर्मी में पशुओं को लू लगने का खतरा बना रहता है एवं लू लगने के कारण पशु बीमार पड़ जाते हैं, जिससे उनके दुग्ध उत्पादन में कमी आ जाती है। साथ ही बीमार पशु की उचित देखभाल ना होने के कारण उसकी मृत्यु तक हो जाती है, जिससे पशु-पालन भाईयों को आर्थिक हानि होती है।

6. गर्मियों में पशुशाला में मच्छर, मक्खी व बाह्य परजीवियों का प्रकोप बढ़ जाता है, जिससे पशुओं के उत्पादन में गिरावट के साथ-साथ उनके बीमार होने का खतरा भी बढ़ जाता है।

गर्मियों के दुष्प्रभाव को पशु-पालक अपने पशुओं में होने वाले व्यवहार के बदलाव से जान सकते है, जिसमें मुख्यत: पशुओं के श्वसन क्रिया व शारीरिक तापमान में वृद्धि होना। पशु अगले पैरों को खोल कर खड़ा होता है तथा गर्दन को खींच कर व मुंह खोल कर सांस लेते हैं। पशु गर्मी होने पर अत्याधिक लार को उत्पन्न करते हैं। भैंसे खासतौर पर कीचड़ या पानी में लोट कर अपने शरीर को ठंडा करने की कोशिश करती हैं। इसके अलावा पशु गर्मी में झुण्ड बना कर छाया वाली जगह पर खड़े होते हैं तथा बैठने की इच्छा कम होती है।

अत: गर्मियों में होने वाले इन दुष्प्रभावों को कम करने के लिए पशु-पालक भाईयों को कुछ बातों का विशेष ध्यान देना अति आवश्यक है।

1. पशुओं के लिए उपयुक्त आवास व्यवस्था :

(1) पशुओं के लिए साफ-सुथरी व हवादार आवास की व्यवस्था होनी चाहिए, जिसका फर्श पक्का व फिसलन रहित हो तथा मूत्र व पानी की निकासी हेतु ढलान हो। पशु गृह ऐसा हो कि पशुओं पर सीधी धूप ना पड़े।

(2) पशुगृह की छत ऊष्मा की कुचालक हो, ताकि गर्मियों में अत्याधिक गर्म ना हो। यदि पशुगृह की छत पक्की या एस्बेस्टस सीट की बनी हो तो उस पर अधिक गर्मी के दिनों में 4 से 6 इंच मोटी घास-फूस की परत या छप्पर डल देना चाहिए। ये परत ऊष्मा अवरोधक का कार्य करती हैं, जिसके कारण पशुशाला के अंदर का तापमान कम बना रहता है।

(3) सूर्य की रोशनी को परावर्तन करने हेतु पशु गृह की छत पर सफेद रंग करना या चमकीली एल्मोनीयम शीट लगाना भी लाभप्रद पाया गया है।

(4) पशुगृह की छत की ऊंचाई कम से कम 10 फुट होनी आवश्यक है, ताकि हवा का समुचित संचार हो सके तथा छत की तपन से भी पशु बच सके।

(5) पशुगृह की खिड़कियां व दरवाज़ों व अन्य खुली जगहों पर जहां से तेज़ गर्म हवा आती हो, बोरी या टाट आदि टांग कर पानी का छिड़काव कर देना चाहिए।

(6) पशुगृह में पंखों व कूलर आदि का उपयोग भी पशुओं को गर्मियों में बचाने हेतु लाभदायक होता है। अत: पशु-पालक भाई अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार इसका उपयोग कर सकते हैं।

(7) पशुओं के आवास गृह में अधिक भीड़-भाड़ नहीं होनी चाहिए। प्रत्येक पशु को उसकी आवश्यकता के अनुसार पर्याप्त स्थान उपलब्ध करवाएं। एक वयस्क गाय व भैंस को चालीस से पचास वर्ग फुट स्थान की आवश्यकता होती है।

(8) पशुगृह के आस-पास छायादार वृक्षों का होना परमावश्यक है। यह वृक्ष पशुओं को छाया तो प्रदान करते ही हैं, साथ ही उन्हें गर्म लू से भी बचाते हैं।

2. पशुओं के शरीर (खासतौर से सिर के ऊपर) पर दिन में तीन या चार बार जब वायुमंडल तापमान अधिक हो (सुबह 11 बजे से 3 बजे के बीच में) ठंडे पानी का छिड़काव करें। इस कार्य के लिए पशुशाला की छत के साथ में पानी छिड़कने की प्रणाली को लगाया जा सकता है। अगर पशु कम है, तो पशु-पालक भाई पाईप व बाल्टी आदि का उपयोग कर पशुओं पर छिड़काव कर सकते हैं। यदि संभव हो तो तालाब व पोखर में भैंसों को ले जाएं। प्रयोगों से यह साबित हुआ है कि दोपहर को पशुओं पर ठंडे पानी का छिड़काव उनके उत्पादन व प्रजनन क्षमता को बढ़ाने में सहायक होता है।

3. पशु-पालकों के लिए अपने दुधारू पशुओं की मदावस्था की सही पहचान बहुत ज़रुरी है, मदावस्था की सही व समय पर पहचान मात्र से ही पशुओं में गाभिन दर 20 से 25 प्रतिशत बढ़ जाती है।

प्रत्येक पशु-पालक को पशुओं के मदकाल या गर्मी में आने के सामान्य लक्षणों से अवगत होना नितांत आवश्यक है, ताकि वह अपने पशुओं को समय पर गर्भित करवा सके।

पशु-पालकों को इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि ज़रुरी नहीं कि सभी पशु मदकाल के समय लक्षणों को प्रकट करते हैं, विशेषत: भैंसों में गूंगी मदावस्था विशेष रूप से गर्मियों में महीनों में अकसर पाई जाती हैं। ऐसी भैंस अन्य पशुओं के समान बोलती नहीं। लगभग 80 प्रतिशत भैंसें सायंकाल छह बजे से प्रात: सात बजे की अवधि में मद में आती हैं। इनमें से भी करीब 70 प्रतिशत भैंसें रात्रि के 12 बजे से सुबह के 4 बजे के मध्य मदावस्था के लक्षण प्रदर्शित करती है। अकसर पशु-पालक इस मदकाल को नहीं पहचान पाते और भैंसें गर्भित होने से वंचित रह जाती हैं। ऐसी भैंसों की मदावस्था की जांच के लिए एक नपुंसक भैंसा का प्रयोग कर सकते हैं। इसके लिए गर्मी की रातों में समस्त ऐसी भैंसों को खुले बाड़े में रख कर भैंसा/सांड, जिसकी अगली दोनों टांगें और गर्दन के नीचे तेल में घुला हुआ गेरू लगा हो, छोड़ देना चाहिए। इसमें यह लाभ होगा कि जो पशु/भैंस मदकाल या गर्मी में होगी, उस पर भैंसा गर्भादान के लिए चढ़ेगा और अमुक भैंस पर गेरू का रंग लग जाएगा। यह इस बात का प्रमाण होगा कि वह भैंस गर्मी में है। जब यह निश्चित हो जाए कि अमुक भैंस गर्मी में हैं, तो यथा समय प्राकृतिक या कृत्रिम विधि द्वारा उस पशु का गर्भादान करवाएं। मदकाल के मध्य समय से आखिरी एक-तिहाई समय में पशुओं का गर्भादान करवाना सफल प्रजनन हेतु अत्यंत आवश्यक है। एक ही समय पर कई बार गर्भित करवाना प्राय: निरर्थक है। समयानुसार निश्चित अंतराल पर गर्भित करवाने से ही शुक्राणुओं व अंडे के मिलने व निषेचन की संभावनाएं प्रबल होती है।

4. गर्मियों में पशु चारा खाना कम कर देते हैं। अत: पशुओं को चारा प्रात: या सायंकाल में ही उपलब्ध करवाना चाहिए तथा जहां तक संभव हो पशुओं को आहार में हरे चारे की मात्रा अधिक रखें। यदि पशुओं को चारागाह में ले जाते हैं, तो प्रात: व सायंकाल को ही चराना चाहिए, जब वायुमंडलीय तापमान कम हो। पशुओं को ऐसा दाना नहीं देना चाहिए, जो ज्यादा गर्मी उत्पन्न करता हो, जैसे चना, चने की चूरी, बिनौले की खली आदि। इसके स्थान पर मक्की का चूरा, गेहूं का चोकर, सरसों की खली आदि दें। ऐसा खाने से पशु के अंदर अधिक गर्मी उत्पादन नहीं होगी और पशु ज्यादा चारा खा सकेगा। गर्मी के दिनों में हरे चारे की कमी होने पर किसान अपने पशुओं को साईलेज (पशु आचार) उपलब्ध करवा सकते हैं तथा 50-60 ग्राम खनिज लवण प्रति पशु की दर से आहार में उपलब्ध करवाएं।

6. पशु-पालकों को पशुशाला की साफ-सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए, क्योंकि पशु अपना अधिकांश समय पशुशाला के अंदर गुजारता है, यही उसे आहार व पानी दिया जाता है और दूध निकाला जाता है। अत: पशुगृह जितना स्वच्छ और आरामदेह होगा, उतना ही उत्पादन बेहतर होगा। इसके लिए पशुशाला में उचित स्वच्छता रखी जानी चाहिए। गोबर व अन्य ठोस पदार्थ पशुशाला में कम से कम दो बार हटाने चाहिए तथा सप्ताह में एक बार फिनायल के घोल से पशुशाला के फर्श की सफाई करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त पशुओं को बाहरी परजीवियों मच्छर, मक्खी, जुएं, चिचड़िया आदि से बचाने के लिए महीने में एक बार उपयुक्त कीटनाशक (मैलाथियान अथवा पैराथियान) दवा का छिड़काव पशु पर एवं पशुशाला में पशु चिकित्सक के परामर्श पर अवश्य करना चाहिए।

7. पशुओं को विभिन्न रोगों जैसे एंथ्रैक्स या ज़हरी बुखार, गलघोंटू, ब्लैक क्वार्टर, ब्रुसलोसिस, टी.बी., खुरपका-मुंहपका रोग आदि के रोग से बचाव के लिए प्रतिरोधक टीके पशु चिकित्सक से परामर्श कर अवश्य लगवाएं, क्योंकि किसान भाई जानते हैं कि पशुओं में होने वाली बीमारियों का उपचार करवाने की बजाय उनका रोकथाम करना अधिक लाभप्रद होता है। अगर पशु बीमार हो जाएं, तो उसे तुरन्त स्वच्छ पशुओं से अलग रखें तथा किसी पशु चिकित्सक द्वारा उपयुक्त इलाज करवाएं। पशुओं को आंतरिक परजीवियों से बचाने हेतु दवा भी समय-समय पर दिलवाएं।

किसान भाई, इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए गर्मियों के मौसम में अपने दुधारू पशुओं का रख-रखाव व पालन करेंगे, तो निश्चित ही वे अपने पशुओं में ग्रीष्म ऋतु में होने वाली विभिन्न समस्याओं से बचा सकते हैं तथा अपने पशुओं की उत्पादन व प्रजनन क्षमता को बनाए रखते हुए दुग्ध व्यवसाय से निरंतर अच्छी आय प्राप्त कर सकते हैं।

किसानों को मिला नया बाज़ार

पठानकोट से 8.3 टन लीची देश के विभिन्न हिस्सों में भेजी गई

उत्तर रेलवे, जम्मू मंडल द्वारा पंजाब के पठानकोट से लीची की पार्सल लोडिंग सेवा को लगातार सफलता मिल रही है। ताज़ा पहल के तहत पठानकोट कैंट रेलवे स्टेशन से 8.3 टन लीची की सफल लोडिंग

शीघ्र खराब होने वाले फल लगभग 24 घंटे में बाज़ार तक पहुंच रहे

कर बांद्रा टर्मिनस, सूरत, सहारनपुर और अहमदाबाद जैसे प्रमुख रेलवे स्टेशनों के लिए एस.एल.आर. द्वारा भेजी जा चुकी है।

दूसरे राज्यों में भेजने के लिए बाग से तोड़ी गई लीची।

यह लीची सीज़न के दौरान विभिन्न स्थानों के लिए लोडिंग सेवा वर्तमान में जारी है और स्थानीय किसानों व व्यापारियों के लिए एक विश्वसनीय परिवहन माध्यम बन गई है। पार्सल वैन के माध्यम से ताज़ा फल कम समय में और सुरक्षित रूप से देश के विभिन्न हिस्सों तक पहुंचाए जा रहे हैं। इस सफल लोडिंग पर वरिष्ठ मंडल वाणिज्य प्रबंधक उचित सिंघल ने कहा कि जम्मू मंडल कृषि उत्पादों के परिवहन को प्राथमिकता दे रहा है। पार्सल लोडिंग सेवा से न केवल किसानों की आय बढ़ रही है, बल्कि 'किसान रेल' की अवधारणा भी साकार हो रही है। हम अधिक से अधिक किसानों से इस सेवा का लाभ उठाने की अपील करते हैं। रेलवे प्रशासन ने स्पष्ट किया कि लीची सीज़न के दौरान पार्सल वैन और लोडिंग-अनलोडिंग की विशेष व्यवस्था की गई है, ताकि किसानों को किसी प्रकार की असुविधा न हो।

अफगानी नस्ल के इस खास आम की सुरक्षा में तैनात रहे 10 गार्ड, मध्य प्रदेश समेत 4 राज्यों में भारी मांग

कट्ठीवाड़ा में 'नूरजहां' आम की फसल तैयार, रिकॉर्ड 3500 रुपए में बिका 3 किलो का आम

मध्य प्रदेश के आलीराजपुर ज़िले के कट्ठीवाड़ा में अपने विशाल आकार और अनोखे स्वाद के लिए विश्व प्रसिद्ध 'नूरजहां' आम की फसल पक कर तैयार हो चुकी है। इस सीज़न में अनुकूल मौसम के कारण फल का अधिकतम वज़न तीन किलोग्राम तक दर्ज किया गया है, जो रिकॉर्ड 3500 रुपए में बिका। बता दें कि पिछले साल साढ़े तीन किलो का आम 3800 रुपए में बिका था। क्षेत्र के किसान शिवराज जादव और भारतसिंह जादव के बगीचों में इस बार केवल 300 फलों का सीमित उत्पादन हुआ है। आकार में बेजोड़ होने के कारण इस आम को खरीदने के लिए मध्य प्रदेश के अलावा गुजरात, महाराष्ट्र और राजस्थान के शौकीनों ने एडवांस बुकिंग करवाई थी। बगीचे के मालिकों ने फसल की सुरक्षा के लिए विशेष रूप से 10 गार्ड तैनात किए थे। अफगानी नस्ल के इस आम की कलम को वर्ष 1965 में गुजरात से लाकर कट्ठीवाड़ा की विशेष आबोहवा और मिट्टी में कड़े परिश्रम से तैयार किया गया है।

सीमित उत्पादन और सुरक्षा का कड़ा पहरा

किसान शिवराज जादव और भारतसिंह जादव के पास नूरजहां प्रजाति के कुल 12 पेड़ हैं। भारतसिंह के 2500 पेड़ों वाले बड़े बगीचे में नूरजहां के 9 पेड़ शामिल हैं। इस साल डेढ़ किलो से लेकर तीन किलोग्राम तक के फल आए हैं। छोटे फलों की कीमत 1000 से 1500 रुपए के बीच रही। इन बेशकीमती आमों की सुरक्षा और देख-रेख के लिए लाठीधारी गार्ड तैनात करने पड़े।

नूरजहां आम का इतिहास बेहद दिलचस्प है

यह प्रजाति मूल रूप से अफगान क्षेत्र की है। किसान भारतराज सिंह जादव के अनुसार, उनके पिता स्वर्गीय रणवीर सिंह जादव वर्ष 1965 के आस-पास गुजरात से इस आम की कलम लेकर आए थे। उन्होंने कट्ठीवाड़ा स्थित अपने फार्म में इसे रोपा और वर्षों की कड़ी मेहनत से संरक्षित किया। यह पौधा आज पूरे आलीराजपुर ज़िले की राष्ट्रीय और अंतराष्ट्रीय पहचान बन चुका है।

तमिलनाडु में शिकारी पक्षियों के पहले सर्वेक्षण में पांच पक्षी कुलों की 51 प्रजातियों की पहचान

तमिलनाडु के सभी वन प्रभागों में किए गए पहले व्यापक राज्य-स्तरीय शिकारी पक्षी सर्वेक्षण में पांच कुलों से संबंधित 51 प्रजातियों की पहचान की गई है। वन विभाग के अधिकारियों ने बताया कि तामिलनाडु शिकारी पक्षियों के लिए एक महत्वपूर्ण आवास है, जहां 'एक्सीपिट्रीफोर्मेस', 'फाल्कनीफोर्मेस' और 'स्ट्रिगीफोर्मेस' श्रेणी की 65 से अधिक प्रजातियां पाई जाती हैं। शिकारी पक्षी 'कीस्टोन प्रजाति' होते हैं और कई तरह की पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं प्रदान करते हैं। इन्हें पर्यावरणीय स्वास्थ्य का 'जैव-संकेतक' माना जाता है।

तमिलनाडु के पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट और तटीय आर्द्रभूमि को शिकारी पक्षियों का प्रमुख आवास बताते हुए अधिकारियों ने कहा कि वैश्विक स्तर पर इनकी संख्या में आ रही कमी से प्रकृति में उनके काम प्रभावित होते हैं। इन कार्यों में परागण, बीजों का बिखराव, मृत जीवों की सफाई और शिकार के जरिए आबादी नियंत्रण शामिल है। इस गणना के तहत तामिलनाडु के 49 वन प्रभागों के कुल 389 ब्लॉकों का सर्वेक्षण किया गया। इसमें 3,643 श्रम दिवस लगे, साथ ही वाहनों से 7,959 किलोमीटर और पैदल 2,115 किलोमीटर की दूरीतय कर सर्वे किया गया। सर्वेक्षण के दौरान पक्षी कुल 5,712 बार देखे गए। इस दौरान 5 कुलों से संबंधित कुल 51 शिकारी पक्षी प्रजातियां दर्ज की गईं। इनमें 'पैंडियोनिडी', 'एक्सीपिट्रिडी', 'फाल्कोनिडी', 'टायटोनिडी' और 'स्ट्रिगिडी' कुल शामिल हैं।

'लोकल नैरेटिव्स' ने 10 राज्यों के 50 गांवों को पर्यटन के साथ लर्निंग से जोड़ा, स्थानीय लोग ही सिखा रहे

ऑस्ट्रेलिया-जापान के बच्चे भारतीय गांवों से सीख रहे हैं; विलेज टूरिज्म पढ़ाई का हिस्सा, गांव अपने उत्पाद बेच रहे, इससे स्थानीय अर्थव्यवस्था भी सुधर रही

टोटो, दुनिया की सबसे छोटी जनजाति है। पश्चिम बंगाल के टोटोपारा गांव में इस जनजाति के आखिरी बचे 1700 लोग रहते हैं। गांव अपनी पहचान के लिए संघर्ष कर रहा था, इकलौते स्कूल में एक अतिरिक्त कमरे की जरूरत थी। खान-पान को बचाने के लिए महिलाएं कैफे खोलना चाहती थीं। टोटोपारा से 2500 किलोमीटर दूर बेंगलुरु की क्राइस्ट यूनिवर्सिटी के छात्रों का 14 सदस्यीय दल बीते साल इस गांव की विजट पर आया। अपने 10 दिन के टूर में महिलाओं के साथ मिल कर कैफे का प्राइसिंग मॉडल-मेन्यू बनाया। छात्रों की इस यात्रा से गांव को 6 लाख रुपए की कमाई हुई। इससे स्कूल का कमरा तैयार हो गया। 'लोकल नैरेटिव्स' ने गांवों में पर्यटन को मनोरंजन तक सीमित नहीं रखा, बल्कि लर्निंग से जोड़ दिया।

जापान–ऑस्ट्रेलिया के 10 संस्थान जुड़े

ऑस्ट्रेलिया की यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू कासल, क्वींसलैंड यूनिवर्सिटी और जापान में टोक्यो व नागोया के 8 स्कूलों के बच्चे इसे सीखने के लिए भारत आ रहे हैं।

भारत के 50 गांव मेजबानी के लिए तैयार

वैष्णवी बताती हैं, लोकल नैरेटिव्स की शुरूआत 2021 में हुई। कम्युनिटी आधारित पर्यटन का उद्देश्य लोकल की तरह गांव में रहकर जनजीवन समझना–सीखना है। इसमें 50 गांवों को मेजबानी के लिए तैयार किया है। इससे गांवों को भी फायदा हो रहा है।

उत्तराखंड के सुनकिया में छात्रों की यात्रा के बाद वहां देश की पहली कम्युनिटी टूरिज्म प्लेबुक तैयार हुई। इससे पर्यटन में मदद मिल रही है। एक अन्य यात्रा में गोवा के असनोरा में बुन कर महिलाओं को खरीददारी से जोड़ा, इससे उनकी कमाई बढ़ी।

IIM बेंगलरु ने इसे क्रेडिट प्रोग्राम के रूप में अप्रूव किया

वैष्णवी कहती हैं, हमने पर्यटन को लर्निंग से जोड़ा। इसके लिए 5 दिन का करिकुलम बनाया। इसमें लोकल नैरेटिव्स को-फैकल्टी था। IIM बेंगलुरु ने इस कोर्स को अप्रूव किया। यानी गांवों में सामाजिक उद्यमिता सीखने के बाद छात्रों को 3 क्रेडिट मतलब मार्क्स भी मिल रहे हैं।

– जैसा रोमेश साहू को बताया

मौसमवाणी : पंजाब में 24 से फिर होगा प्री–मौनसून का दौर

मौनसून की चाल धीमी, पंजाब में 3 जुलाई से पहले पहुंचेगा

पंजाब में गर्मी अपने तेवर दिखा रही है। औसत अधिकतम तापमान में 2 डिग्री की बढ़ोत्तरी हुई। 22 जून को मौनसूनी हवाएं प्रवेश करेंगी। इसके प्रभाव में प्री-मौनसून का नया दौर 24 को दिखेगा। सूबे में 30 जून से लेकर 3 जुलाई के बीच मौनसून की एंट्री संभव है। मौसम वैज्ञानिक ए.के. शुक्ला के अनुसार 1 जून को वैसे मौनसून केरल में प्रवेश करता है। इस बार 4 जून को इसकी एंट्री हुई, लेकिन बंगाल की खाड़ी में इसकी सक्रियता के चलते कई जगहों पर समय से पहले भरपूर बारिश हुई, लेकिन आसमानी चक्रवात में रुकावट के कारण मौनसून की चाल रुक गई। इससे प्रारंभिक मौसम में बारिश औसत से काफी कम रही। बारिश में कमी आने की संभावना है। पंजाब में फिलहाल मौनसून की एंट्री में देरी के आसार नहीं हैं। जुलाई की शुरूआत में मौनसून एंटर करेगा।

पंजाब में मौनसून की एंट्री का 10 साल का ट्रेंड

* **2025 : 22 जून :** समय से थोड़ा पहले आगमन, लेकिन फिर ब्रेक लगने के बाद जुलाई में बारिशें शुरू हुईं।
* **2024 : 27 जून :** बिल्कुल सामान्य समय पर (2 जुलाई तक पूरे राज्य में कवर किया)।
* **2023 : 25 जून :** जून के आखिरी हफ्ते में तेज़ी से आगे बढ़ा।
* **2022 : 30 जून :** सामान्य गति से जून के अंत में प्रवेश।
* **2021 : 13 जून :** सबसे जल्दी आगमन (तब समय से 17 दिन पहले अमृतसर पहुंचा)।
* **2020 : 24 जून :** तय समय से 6 दिन पहले पहुंचा।
* **2019 : 2 जुलाई :** समान्य से कुछ दिन की देरी।
* **2018 : 28 जून :** जून के आखिरी दिनों में दस्तक।
* **2017 : 11 जुलाई :** सबसे अधिक देरी, जुलाई के दूसरे सप्ताह में पहुंचा।
* **2016 : 28 जून :** सामान्य समय पर प्रवेश हुआ।

देश का बड़ा हिस्सा बारिश के लिहाज से 'नो वार्निंग' श्रेणी में

* 17 जून तक देश में 46.2 मि.मी. वर्षा हुई है, जबकि सामान्य वर्षा 74.3 मि.मी. होती है। यानी 37.8 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई। 17 जून को देश का बड़ा हिस्सा बारिश के लिहाज से 'नो वार्निंग' श्रेणी में था।

लगातार तीसरे साल जून में मौनसून का लंबा ब्रेक

मौनसून की पश्चिमी शाखा की प्रगति 8 जून से लगभग अटकी हुई है। लगातार तीसरे साल जून में मौनसून ने लंबा ब्रेक लिया है। हालांकि 2024 और 2025 में मौनसून के शुरूआती ब्रेक के बावजूद सामान्य से अधिक बारिश दर्ज की गई थी।

मौसम विभाग के अनुसार, अगले 4–5 दिनों में मौनसून के आगे बढ़ने की परिस्थितियां बन सकती हैं। 21 से 23 जून के बीच दोबारा प्रगति संभव है। ऐसे में मौनसून में 13 से 15 दिन का ब्रेक दर्ज हो सकता है। 2024 में मौनसून की पश्चिमी शाखा जून के दूसरे सप्ताह में 8–9 दिनों तक धीमी रही थी। वहीं, 2025 में महाराष्ट्र तट के आसपास इसकी प्रगति करीब तीन हफ्ते रुकी रही थी। ऐसे में, बारिश कम दिनों में और ज्यादा तीव्रता से होती है।

* अमेरिकी राष्ट्रीय महासागरीय एवं वायुमंडलीय प्रशासन (एन.ओ.ए.ए.) की उपग्रह रिपोर्ट्स के अनुसार इंटरट्रॉपिकल कन्वर्जेंस जोन पर्याप्त गति से सक्रिय होने से मौनसून की रफ्तार धीमी है। यह सामान्यतः जून के मध्य तक उत्तर की ओर बढ़ कर भारत में नमी खींचता है।

* अल नीनो की परिस्थितियां भी विकसित हो रही हैं। इसके परिणामस्वरूप लंबे सूखे अंतराल और असमान वर्षा देखने को मिल सकती है। उपग्रह के आंकड़े पूर्वी भारत में सक्रिय गरज–चमक का संकेत देते हैं। लेकिन मध्य प्रदेश, गुजरात, राजस्थान और पश्चिमी भारत में बादलों का घनत्व कम है।

धान ने छीनी कपास की खेती की जमीन, किसानों का भरोसा क्यों टूटा?

उत्तर भारत में इस खरीफ सीजन कपास की खेती को बड़ा झटका लगा है। पंजाब, हरियाणा और राजस्थान जैसे प्रमुख कपास उत्पादक राज्यों में किसानों का रुझान कपास से हट कर धान की ओर बढ़ता दिख रहा है। रिपोर्ट्स के अनुसार, उत्तर भारत में कपास का रकबा करीब 22 प्रतिशत तक घटा है। यह गिरावट साफ संकेत देती है कि किसानों का कपास पर भरोसा कमजोर हो रहा है और वे अब ज्यादा सुरक्षित मानी जाने वाली फसलों की ओर रुख कर रहे हैं।

कपास से धान की ओर क्यों बढ़े किसान?

किसानों के फैसले के पीछे सबसे बड़ा कारण फसल बिक्री का भरोसा है। धान की सरकारी खरीद व्यवस्था मजबूत मानी जाती है, जहां किसानों को एम.एस.पी. और खरीद केंद्रों का सहारा मिलता है। वहीं कपास में कीमतें बाजार, गुणवत्ता और मांग पर निर्भर करती हैं। कई बार किसान अच्छी फसल लेने के बाद भी मंडी में बेहतर भाव नहीं पा पाते।

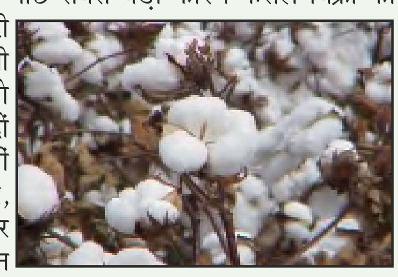

कीटों और लागत ने बढ़ाई परेशानी

कपास की खेती में सफेद मक्खी और पिंक बॉलवर्म जैसे कीट किसानों के लिए बड़ी चुनौती बने हुए हैं। इनसे बचाव के लिए किसानों को बार-बार कीटनाशकों का इस्तेमाल करना पड़ता है, जिससे लागत बढ़ जाती है। इसके बावजूद फसल नुकसान का खतरा बना रहता है। किसानों का कहना है कि कपास में मेहनत और खर्च दोनों ज्यादा हैं, लेकिन मुनाफे की गारंटी नहीं है।

पंजाब में लक्ष्य से पीछे रही बुवाई

पंजाब में इस साल कपास की बुवाई लक्ष्य से काफी पीछे रही। मई के मध्य तक राज्य अपने कपास बुवाई लक्ष्य का करीब 32 प्रतिशत ही पूरा कर पाया था। इससे साफ है कि किसान कपास को लेकर पहले जैसा उत्साह नहीं दिखा रहे। हरियाणा और राजस्थान के कुछ इलाकों में भी किसान धान या दूसरी फसलों को ज्यादा सुरक्षित विकल्प मान रहे हैं।

धान में भरोसा, लेकिन पानी की चिंता

धान किसानों के लिए बाजार के लिहाज से सुरक्षित विकल्प जरूर बन रहा है, लेकिन इसका बढ़ता रकबा भूजल के लिए चिंता बढ़ा सकता है। पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में पहले से ही पानी का स्तर नीचे जा रहा है। ऐसे में कपास से धान की ओर बढ़ता रुझान सरकारों के फसल विविधीकरण अभियान के लिए भी चुनौती बन सकता है।

कपास को फिर आकर्षक बनाना जरूरी

कृषि विशेषज्ञों का मानना है कि कपास की खेती को फिर से मजबूत बनाने के लिए किसानों को बेहतर बीज, समय पर कीट प्रबंधन सलाह, फसल बीमा और भरोसेमंद बाजार भाव की जरूरत है। अगर कपास में आय की सुरक्षा नहीं बढ़ाई गई, तो आने वाले वर्षों में इसका रकबा और कम हो सकता है। उत्तर भारत में कपास का घटता रकबा केवल फसल परिवर्तन नहीं, बल्कि किसानों के भरोसे में बदलाव की कहानी है। किसान अब वही फसल चुन रहे हैं, जिसमें जोखिम कम और बिक्री का भरोसा ज्यादा हो। फिलहाल धान ने यही भरोसा देकर कपास की जमीन अपने नाम कर ली है।

बेकार समझा जाने वाला कैक्टस बना किसानों का 'ब्लू गोल्ड'

भारत में एक कांटेदार रेगिस्तानी पौधे ने नई ड्रिंक्स इंडस्ट्री को जन्म दिया है। आंध्र प्रदेश के कांदुकर में ज्यादातर किसान पहले टमाटर, मूंगफली और मक्का उगाते थे। 2010 में कुछ व्यापारी एगेव अमेरिकाना नाम के कैक्ट्स की तलाश में कांदुकर पहुंचे। इसे किसान बेकार समझ कर खेत की बाड़ के रूप में लगाते थे। बी.बी.सी. वर्ल्ड की रिपोर्ट के मुताबिक, यही एगेव कैक्टस मैक्सिको की 1.4 लाख करोड़ रुपए की टकीला और मेजकल इंडस्ट्री की रीढ़ है। मेक्सिको के जलिस्को राज्य में सिर्फ चुनी हुई जगहों पर उगाने वाला 'ब्लू एगेव' टकीला बनाने के लिए मान्य है। भारत में अभी इसकी कमर्शियल खेती नहीं होतीं किसान और उद्यमी जंगली एगेव इकट्ठा करते हैं। कांदुकर में अब 1000 किलोमीटर के दायरे में कई गांवों के किसान

भारत में अभी एगेव की संगठित खेती नहीं होती। कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान और आंध्र प्रदेश में बिखरे जंगली पौधों को स्थानीय एजेंट इकट्ठा करते हैं।

डिस्टिलरीज़ को बड़े पैमाने पर सप्लाई कर रहे हैं। इसके लिए उन्हें अच्छी कीमत मिलती है। इसीलिए इसे 'ब्लू गोल्ड' कहा जाने लगा है। एगेव की खेती मुश्किल है। पौधे का सबसे अहम हिस्सा 'पीना' (अनानास जैसा दिखने वाला कोर) होता है, जिसमें शूगर जमा होती है। लेकिन जैसे ही पौधा फूल देने लगता है, सारी शूगर तेज़ी से ऊपर तने की ओर चली जाती है और पीना बेकार हो जाता है। किसानों के मुताबिक, पौधे को फूल आने से ठीक पहले काटना पड़ता है। काटने के बाद 24 घंटे के भीतर इसे प्रेशर कुकर तक पहुंचाना जरूरी है, वरना शुगर सड़ने लगती हे। स्वाद खराब हो जाता है।

भारत में एगेव स्पिरिट का बाज़ार सालाना 31 प्रतिशत बढ़ रहा है। अब उपभोक्ता नए स्पिरिट्स आजमाने के लिए ज्यादा खुले हैं, हालांकि एगेव ड्रिंक्स व्हिस्की की जगह नहीं ले सकतीं, लेकिन यह अपना अलग बाज़ार बना सकती हैं। 2011 में भारत की पहली एगेव डिस्टिलरी शुरू करने वाले बेसमंड नजारेथ सैटेलाइट इमेजरी की मदद से इसकी खेती के लिए ज़मीन तलाश रहे हैं। एक बार गलत जगह लगाने पर 9-13 साल की मेहनत बेकार हो सकती है। हालांकि भारत और मेक्सिको के मॉडल में बड़ा फर्क है। मेक्सिको में दशकों की सेलेक्टिव ब्रीडिंग से एगेव की क्वालिटी एक जैसी है, जबकि भारत में शूगर की मात्रा अलग-अलग है। इससे प्रोडक्शन स्टैंडर्डाइज करना मुश्किल है।

कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान में बाज़ार, भारत आगामी वर्षों में मेक्सिको को टक्कर दे सकता है

मेक्सिको में जलिस्को राज्य की लाल मिट्टी में वर्षों से एगेव की व्यवस्थित खेती होती है। भारत में अभी एगेव की संगठित खेती नहीं होती। कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान और आंध्र प्रदेश में बिखरे जंगली पौधों को स्थानीय एजेंट इकट्ठा करते हैं। डेक्कन पठार के लाखों एकड़ उपयुक्त ज़मीन के साथ भारत भविष्य में मेक्सिको को टक्कर दे सकता है।

मेघालय में एशिया के सबसे स्वच्छ गांव मावलिननॉन्ग में मिली जुगनू की नई प्रजातियां

जुगनू अपेक्षाकृत इन इलाकों में पाए गए जहां हस्तक्षेप अपेक्षाकृत नहीं

एशिया के सबसे स्वच्छ गांव के रूप में ख्याति प्राप्त मेघालय के मावलिननॉन्ग के साथ एक और खासियत जुड़ गई है। यहां पर अनुसंधानकर्ताओं ने जुगनू की नई प्रजातियों की खोज की है। अधिकारियों ने बताया कि इस क्षेत्र में मेघालय के पहले वैज्ञानिक रूप से दर्ज किए गए चमकदार कीड़ों का दस्तावेजीकरण किया है। असम के डॉन बॉस्को विश्वविद्यालय की एम्मा मैग्डलीन नोंमलांग के नेतृत्व में किए गए अध्ययन में पूर्व में अज्ञात 2 प्रजातियों, डायफेन्स मावलिननॉन्ग की पहचान की गई है, जिनमें से बाद वालीप्रजाति का नाम उस गांव के नाम पर रखा गया है, जहां इसे पहली बार दर्ज किया गया था। उन्होंने बताया कि जहां एक ओर राज्य में कई क्षेत्रों में डायफेन्स मेघालयनस पाई गई, वहीं डायफेन्स मावलिननॉन्ग गांव के घने जंगलों में देखा गया। अनुसंधानकर्ताओं ने बताया कि जुगनू अपेक्षाकृत उन इलाकों में पाए गए, जहां हस्तक्षेप अपेक्षाकृत नहीं है, जिनमें अर्ध-सदाबहार वन और झरनों के पास बांस के झुरमुट शामिल हैं। इन इलाकों में मानवीय हस्ताक्षेप न्यूनतम है और कृत्रिम प्रकाश का स्तर बहुत कम है। उन्होंने बताया कि क्षेत्र का अवलोकन करने पर जानकारी मिली की कि डायफेन्स मेघालयनस 18-20 डिग्री सैल्सियस की ठंडी, आर्द्र परिस्थितियों में रहते हैं और नर ज़मीन से 10-15 मीटर की ऊंचाई पर उड़ते समय हल्के हरे रंग की रोशनी उत्सर्जित करते हैं। अनुसंधानकर्ताओं के मुताबिक इसके विपरीत, डायफेन्स मानलिननॉन्ग घने वन क्षेत्रों में पाए गए। उन्होंने बताया कि नर जुगनू अधिक ऊंचाई पर उड़ते हैं, जबकि पंखहीन मादाएं चट्टानों के नीचे पाई गईं, जिससे धीमी और लंबे समय तक रहने वाली रोशनी उत्पन्न होती है। अनुसंधानकर्ताओं ने कहा कि यह खोज महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे पहले मेघालय से जुगनुओं के कोई प्रकाशित रिकॉर्ड या संग्रहालय नमूने मौजूद नहीं थे। नोंगलांग ने कहा कि जुगनु प्रकाश प्रदूषण के प्रति अत्याधिक संवेदनशील होते हैं। उन्होंने बताया कि प्राकृतिक अंधेरा कम होने पर अक्सर उनकी संख्या में गिरावट आती है। सह-अनुसंधानकर्ता जेन वानरी शांगप्लियांग ने कहा कि जुगनू पर्यावरण के स्वास्थ्य और पारिस्थितिक संतुलन के प्रमुख संकेतक के रूप में कार्य करते हैं।